नवभारत टाइम्स

नवभारत टाइम्स । नई दिल्ली। सोमवार, 27 मई 2024

नियमों पर अमल हो

गुजरात के राजकोट में एक एम्यूजमेंट पार्क के अंदर गेमिंग जोन में लगी आग की लपटें अभी ठीक से बुझी भी नहीं थीं कि शनिवार देर रात राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली में बच्चों के एक प्राइवेट हॉस्पिटल में आग लगने की खबर आ गई। दोनों ही घटनाओं में हताहत होने वालों में ज्यादातर छोटे बच्चे हैं। निश्चित रूप से ये हादसे हैं, लेकिन जिस तरह के हालात में ये घटनाएं हुईं वे बताती हैं कि मानवीय जिम्मेदारी वाले पहलू को अनदेखा नहीं किया जा सकता।

जांच के आदेश | यही वजह है कि दोनों ही मामलों में तत्काल जांच के आदेश दे दिए गए। मगर आम तौर पर ऐसे आदेश घटना से उपजे असुविधाजनक सवालों की ओर से लोगों का ध्यान हटाने भर का काम करते हैं। जांच पूरी होने तक मामला ठंडा हो चुका होता है और फिर इस बात की ओर किसी का ध्यान नहीं जाता कि रिपोर्ट का क्या निष्कर्ष रहा और उस पर किस तरह की कार्रवाई हुई।

बच्चे बने विक्टिम

शक का आधार | इन दोनों मामलों में शुरुआती सूचनाएं ही संदेह का पुख्ता आधार प्रदान कर रही हैं। मसलन, यह बताया गया कि राजकोट के प्राइवेट एम्यूजमेंट पार्क में चल रहे गेमिंग जोन को फायर NOC नहीं मिला था। इसके बावजूद यह गेमिंग जोन धड़ल्ले से चल रहा था, बड़ी संख्या में बच्चे यहां महंगे टिकर लेकर आ रहे थे और अगर आग लगने की यह घटना न होती तो पता नहीं कब तक सब कुछ ऐसे ही चलता रहता। क्या स्थानीय प्रशासन को इस बात का अंदाजा नहीं होना चाहिए कि उसके कार्यक्षेत्र में किस तरह के व्यवसाय कानूनी प्रक्रियाओं की अनदेखी करते हुए चलाए जा रहे हैं?

घटनाओं की पुनरावृत्ति | दिल्ली वाली घटना में आग लगने की वजहों का पता लगाने की कोशिश हो रही है। फिलहाल स्वाभाविक ही प्रशासन की प्राथमिकता घायलों को बेहतर चिकित्सा सुविधा मुहैया कराने पर है। लेकिन राजधानी में प्राइवेट संस्थानों में आग लगने और बेकसूर लोगों के मारे जाने की घटनाएं कोई नई या चौंकाने वाली बात नहीं है। कभी कोई फैक्ट्री इस वजह से सुर्खियों में आती है तो कभी कोचिंग संस्थान। घटना के बाद पता चलता है कि वे संस्थान तमाम कानूनी प्रक्रियाओं को ताक पर रखते हुए चलाए जा रहे थे।

लापरवाही स्वीकार्य नहीं | यह स्थिति स्वीकार नहीं की जा सकती। हालांकि रातोंरात इसे बदला नहीं जा सकता। न तो घने बसे इलाकों में पहले से बनी इमारतों की संरचना एक झटके में बदली जा सकती है और न ही यहां चल रही व्यावसायिक गतिविधियां पूरी तरह बैन की जा सकती हैं। इनसे हजारों लोगों की आजीविका भी जुड़ी हुई है। मगर नियम-कानूनों को हलके में लेने की आदत सही नहीं मानी जा सकती। न ही इन्हें लागू करने में किसी तरह का भेदभाव बर्दाश्त किया जाना चाहिए।

चक्र-व्यू

रुकी हुई रेल

राहुल पाण्डेय

पदम भाई पुराने मित्र हैं, दिल्ली में रहते हैं। दिल्ली की गरमी का तो सबको पता ही है कि कैसी पड़ रही है। इसी झुलसाती धूप में द्वारका कोर्ट जाते हुए अक्सर उन्हें एक अधेड़ युवक दिखता था। बीच डिवाइडर पर बैठा। न कोई ओट, ना कोई छांव। आता-जाता ट्रैफिक भी न देखता। पास एक कॉपी थी। उसी पर लिखता मिलता। कई दिनों तक तो पदम भाई ने उसे वॉच किया। कल गाड़ी रोकी। पूछा 'क्या लिखते रहते हो भाई?' उसने मुंह तक ना उठाया। पूछा, कौन हो? फिर चुप। फिर पूछा, 'जवाब नहीं देना चाहते?' पहली बार उसने रिएक्शन दिया, वो भी ना में। अपनी कॉपी में वह कुछ अजीब सा लिख रहा था। एकबारगी पदम भाई को लगा कि शायद रामनाम लिख रहा होगा! राम जी का नाम मैंने लोगों को भक्ति में ही नहीं, शिकायत के लिए भी लिखते देखा है। मुरादाबाद के मेरे एक मित्र अपने एक प्रिय भांजे की असमय मौत के बाद जाने कितने दिनों तक कॉपी में राम जी का नाम लिखकर उनसे शिकायत करते रहे। उनकी अटकी हुई घड़ी मेरे पास है। जाते-जाते पदम भाई ने पूछा कि फोटो ले लूं? इस बार उसने हां बोली। पदम भाई ने उसकी कॉपी की फोटो खींची। फिर पूछा, क्या लिख रहे हो? उसने बताया, Poem लिख रहा हूं। वह फोटो दिखाकर पदम भाई ने चैलेंज किया कि पढ़कर दिखाओ। अब यह तो सब जानते ही हैं कि कविता कैसी भी हो, मैं पढ़ लेता हूं! पहले मैंने AI को उस टास्क पर लगाया। नाम नहीं लूंगा, मगर सब की सब टांय-टांय फिस्स ही निकलीं। तपती धूप में जलते डिवाइडर पर बैठकर अनजानी तंद्रा में तराशे गए शब्दों को पढ़ना मशीन को अभी और सीखना होगा। खैर, मैंने डायरी का पन्ना ध्यान से पढ़ना शुरू किया। हैरानगी की हद यह कि एक-एक शब्द खूबसूरत। जैसे कैलिग्राफी की गई हो। लहरों को छोड़ दें तो लगभग सब पढ़ने में आ रहा था। लिखा था- *'ना मौत चले, ना जीवन की रेल। मीर बावला रेल हूं मैं।'* कविता में 90 फीसदी से अधिक दोहराव था, मगर मैंने पूरी पढ़ी। कवि पागल ही क्यों ना हो, पर कविता अपने पूरे पागलपन में भी कुछ कहकर या बताकर ही जाती है। इसीलिए कवि कितने भी खराब हों, पसंद किए जाते रहे हैं। डिवाइडर पर बैठे उस कवि की रेल एक जगह पर अटक चुकी है। मर नहीं पा रहे हैं, जी भी नहीं पा रहे हैं। इसलिए कविता में गाना गा रहे हैं। खामोश दुख में अटकी दास्तानें ऐसी ही होती हैं। डिवाइडर पर अटकी उस आदमी की जाने कब तक के लिए डीरेल हो चुकी रेल की तरह। जब-जब चलने को सीटी मारती है, कवि कॉपी में लिखता है- *'मर-मर जी-जी मौत जी रेला हूं। तू चल अपन भी आ रेला हूं..'*

एकदा

नरगिस के फूल

उर्दू-फारसी के महान शायर मीर तकी मीर आज होते तो पूरे तीन सौ साल के होते। लेकिन अगर होते तो दो बातें जरूर होतीं। एक तो उनकी शायरी, दूसरी उनकी बदमिजाजी। लेकिन कहते हैं ना कि हर बदमिजाज का दिल किसी नर्म फाहे सा होता है। वह प्रेम भी बहुत करते थे। बात तब की है, जब मीर के पिता बीमार होकर बिस्तर पकड़ चुके थे। एक दिन उन्होंने मीर को बुलाया और बोले, बेटा, मेरी जान जितनी भी बची है, अब सिर्फ ईश्वर का प्रसाद है। जिस्म घुला जाता है। कुछ खाने का मन नहीं होता। खाता हूं तो भारीपन रहता है। जी का हाल तो ऐसा कि कभी जी में रहता ही नहीं है। हकीम दवा देता है, वह भी मेदे में सुबह तक बैठी रहती है। चाहता हूं कि मौत आने तक खाना छोड़ दूं। एक काम करो, बाजार जाओ और वहां से नरगिस के फूल ले आओ। बची जिंदगी उन्हीं को सूंघकर काम चला लूंगा। मीर बाजार पहुंचे। नरगिस के दस्ते ले आए। पिता आंख खोलते, दस्ता हाथ में लेकर सूंघते और फरमाते, खुदा का शुक्र है, सैर हो गई। जब भोजन छोड़ दिया तो पिता बेहद कमजोर हो गए। हाथ-पैर हिलाना मुश्किल हो गया। करवट बदलने के लिए भी मीर को ही आवाज देते। दिन कुछ ऐसे आ गए कि बिस्तर पर ही सब कर्म होने लगे। जाहिर है, उनका वक्त नजदीक आ चला था। मीर कुछ कर भी नहीं पा रहे थे, क्योंकि हकीम जो कुछ भी देते, पिता उसे फेंक देते या छूने तक से इनकार कर देते। पिता के जीवन का बुझता चिराग देख मीर ने कहा, *'शाम से कुछ बुझा सा रहता हूं/ दिल हुआ है चराग मुफ्लिस का/ दाग आंखों से खिल रहे हैं सब/ हाथ दस्ता हुआ है नरगिस का।'*

AI Image

संकलन : **जमील गुलरेज**

बाकी देश से हमेशा अलग रही है पंजाब की सियासी राह, यहां नहीं चलती किसी की हवा

पंजाब क्या फिर अलग रास्ते पर चलेगा

आशुतोष कुमार

देश के हर राज्य में चुनाव के लिए अलग विकल्प हैं और अलग राजनीतिक दल हैं। ऐसे में कहा जा सकता है कि हर सूबा एक छोटा लोकतंत्र है। इसी वजह से चुनावों को समझने के लिए राज्य सबसे बेहतर विश्लेषण इकाई हैं। पंजाब में बाकी राज्यों से बहुत समानता है, फिर भी कुछ बातें हैं जो इसे दूसरों से अलग बनाती हैं।

कांग्रेस से दूरी | पहली वजह है कि आजादी के बाद के शुरुआती बरसों में भी पंजाब में 'कांग्रेस सिस्टम' नहीं था। दूसरे राज्यों की तुलना में यहां कांग्रेस को अकाली दल और जनसंघ से कड़ी टक्कर का सामना करना पड़ा। यही वजह है कि 1966 में राज्य पुनर्गठन के बाद पंजाब में गठबंधन सरकार का बनना आम रहा।

राजनीतिक ताकत | ज्यादातर राज्यों में पिछले साढ़े तीन दशकों में मध्यम और निचली जातियों का राजनीतिक ताकत के रूप में उदय हुआ है। हालांकि पंजाब इस मामले में अलग है। यहां की एक तिहाई आबादी अनुसूचित जाति है। इसके बाद भी राजनीतिक शक्ति जाट सिख किसानों के हाथों में है, जिनके पास जमीन है। पिछले विधानसभा चुनाव में कांग्रेस को मिली विफलता से भी यह बात जाहिर होती है। कांग्रेस ने तब सत्ता विरोधी लहर से बचने के लिए आखिरी वक्त पर दलित मुख्यमंत्री बना दिया था, पर चुनाव में उसे इसका फायदा नहीं मिला। राज्य में कांग्रेस अपनी सरकार नहीं बचा पाई थी।

कमजोर बीजेपी | पंजाब में BJP ने 1997 से 2021 तक अकाली दल के साथ गठबंधन किया। बावजूद इसके पार्टी अभी तक सीटों या वोट पर्सेंटेज के लिहाज से अपनी दमदार मौजूदगी दर्ज नहीं करा पाई है। यह बात पंजाब को उन दूसरे राज्यों से अलग करती है, जहां पहले कभी BJP कमजोर हुआ करती थी। उन जगहों पर पहले उसने ताकतवर क्षेत्रीय दलों के साथ गठबंधन किया और फिर खुद ही एक जीतने वाली पार्टी बन गई। ओडिशा, बंगाल, बिहार और कर्नाटक इसके उदाहरण हैं।

सबसे हटकर
- क्षेत्रीय दल लगातार कमजोर हुए
- BJP नहीं बना सकी है मजबूत जगह
- आम चुनाव में भी स्थानीय मुद्दे हावी

स्थानीय मुद्दे हावी | पंजाब कभी भी देश में चल रही लहर के प्रभाव में नहीं आया, न तो कांग्रेस के समय और न अब BJP के दौर में। BJP आर्टिकल 370, समान नागरिक संहिता, देश की सुरक्षा और विश्व मंच पर भारत के बढ़ते कद जैसे राष्ट्रीय मुद्दों पर चुनाव लड़ने की कोशिश कर रही है, लेकिन पंजाब में इसका बहुत असर होता नहीं दिख रहा। यहां लोकसभा चुनावों में भी स्थानीय मुद्दे निर्णायक रहे हैं।

AI Image

AAP की मजबूती | पंजाब एकमात्र ऐसा राज्य है, जहां आम आदमी पार्टी अभी तक कोई लोकसभा सीट जीतने में सफल हो सकी है। 2014 के आम चुनाव में AAP दो साल पुरानी पार्टी थी और तब उसने पंजाब की 13 लोकसभा सीटों में से चार पर जीत दर्ज की थी। 2017 के विधानसभा चुनावों में वह मुख्य विपक्षी पार्टी बन गई। फिर 2022 में 117 में से 92 विधानसभा सीटों पर कब्जा जमाया। इस आम चुनाव में भी आम आदमी पार्टी मुकाबले में है।

बदलाव से दूरी | पूरे देश में राइट विंग की तरफ वैचारिक बदलाव होता दिख रहा है। मैदानों से लेकर पहाड़ों तक यह चेंज आ रहा। बड़ी हिंदू आबादी होने के बावजूद पंजाब इससे भी अछूता है। अमृतपाल सिंह वाले एपिसोड और संगरूर लोकसभा उपचुनाव में सिमरनजीत मान की जीत के बाद भी सिख समुदाय में कट्टरपंथी विचारों के फिर से उभरने के कोई संकेत नहीं हैं।

अकाली दल का उतार | एक और बात जो पंजाब को बाकी राज्यों से अलग करती है, वह है कि यहां क्षेत्रीय दल भी अच्छा प्रदर्शन नहीं कर रहे। दूसरी ओर कई राज्यों में क्षेत्र विशेष राजनीतिक, सांस्कृतिक और आर्थिक अजेंडे वाली पार्टियां बड़े-बड़े दिग्गज दलों को चुनौती दे रही हैं। पंजाब में अकाली दल सौ साल से भी ज्यादा पुरानी पार्टी है। ब्रिटिश राज के दिनों से इसने राज्य का पॉलिटिकल अजेंडा तय किया था। लेकिन, अब यह लगातार गिरावट पर है। उसकी ऐसी स्थिति BJP के कारण नहीं, बल्कि अपनी रणनीतिक गलतियों और संगठन से जुड़े मुद्दों के कारण है।

किसान आंदोलन | पंजाब पर ताकतवर किसान समुदाय का प्रभाव है। ऐसे में हरित क्रांति के बाद राज्य में कृषि क्षेत्र पर आया गंभीर संकट बेहद चिंता का विषय है। किसान तीन महीने से ज्यादा समय से सिंधु बॉर्डर पर डटे हुए हैं। इससे 2020 के किसान आंदोलन की याद आ जाती है, जो तीन कृषि कानूनों के विरोध में हुआ था।

मोदी मैजिक | अब बड़ा सवाल यही है कि क्या 2024 के लोकसभा चुनाव में पंजाब बाकियों से अलग बना रहेगा। 27 साल के लंबे गैप के बाद BJP राज्य में अकेले इलेक्शन लड़ रही है। उन सीटों पर पार्टी का प्रदर्शन देखना दिलचस्प होगा, जहां वह पहली बार चुनाव लड़ रही है और जहां हिंदुओं की अच्छी-खासी आबादी है। इनमें खासतौर पर लुधियाना और जालंधर की सीटें हैं। इसी तरह वे लोकसभा क्षेत्र भी हैं, जहां पार्टी अतीत में अकाली दल के साथ मिलकर जीत हासिल कर चुकी है। मसलन, गुरदासपुर और होशियारपुर में पांच बार, जबकि अमृतसर में तीन बार जीत मिली है। यह भी देखना रोचक होगा कि पंजाब में आखिरकार पीएम नरेंद्र मोदी का जादू चलता है या नहीं।

(लेखक पंजाब यूनिवर्सिटी में पॉलिटिकल साइंस के प्रफेसर हैं)

सोलो ट्रैवलिंग ज़िंदगी जीने की ट्रेनिंग देती है

AI Image

जीवन आनंद

हर सफर के पीछे कोई वजह होती है। इडा लॉरा फाइफर के लिए भी थी। दुनिया देखनी थी उन्हें, जानना था उसे। लेकिन, वह जिस दुनिया में सांस ले रही थीं, उसमें किसी महिला के लिए अकेले घर से बाहर निकलने की यह कोई वजह नहीं थी। उनके देश ऑस्ट्रिया और तकरीबन पूरे ही यूरोप में 19वीं सदी में महिलाओं का सुदूर यात्रा पर जाना अपवाद हुआ करता था। उसमें भी अकेले निकलने का तो सवाल ही नहीं। लॉरा ने बहाना बनाया कि वह अपनी एक सहेली से मिलने जा रही हैं। उन्होंने डेन्यूब नदी पार की, काले सागर की लहरों को झेला, इजिप्ट के रेगिस्तान से गुजरीं। वह जहां भी गईं, उन्हें घूरती निगाहों का सामना करना पड़ा, जिनमें एक अकेली महिला के सफर पर निकलने को लेकर कई सवाल थे। फिर भी लॉरा चलती रहीं। तब उनके चलने को बगावत माना गया था, लेकिन आज वह उपलब्धि है। लॉरा की गिनती शुरुआती महिला travellers में होती है।

कहते हैं कि अगर साथ चलने वाला सही हो, तो सफर का पता नहीं चलता। लेकिन, अगर सफर के जरिये ही सब जानना-पहचानना हो, तो अकेले चलना ही बेहतर है। सोलो ट्रैवलिंग का सबसे बड़ा आनंद है आजादी। वहां हर फैसला हमारा होता है। हर रास्ता हम खुद चुनते हैं। आगे बढ़ने के लिए किसी का इंतजार नहीं होता और ठहरने के लिए किसी से पूछना नहीं पड़ता। अपनी घड़ी और कदम किसी और से मिलाने नहीं पड़ते। यह आजादी मौका देती है उन जगहों से जुड़ने की, जहां से हम गुजरते हैं। नए लोगों से मिलने और नई संस्कृतियों को जानने का अवसर मिलता है। अकेलापन हमें प्रेरित करता है अधिक सामाजिक होने के लिए, नए दोस्त बनाने के लिए। उनसे बातें करने के लिए, उन्हें समझने के लिए।

हम सभी किसी न किसी लेवल पर एक कंफर्ट जोन में फंसे हुए हैं। सुरक्षित होने का अहसास वहां से बाहर ही नहीं निकलने देता। लेकिन, यह जोन एक गोलचक्कर की तरह है, जहां आकर जीवन बार-बार एक ही रास्ते पर घूम रहा है। सोलो ट्रैवलिंग निकालती है इस कंफर्ट जोन से। वह नई राह पर ढकेलती है। नई जगह, नई चुनौतियों से लड़ना सिखाती है। तैयार करती है और भी मुश्किल चीजों के लिए। और अगर तैयारी है भी नहीं, तो क्या फर्क पड़ता है! जिंदगी में हर चीज तो प्लान के हिसाब से होती नहीं। कई बार हालात को देखकर तुरंत कोई निर्णय लेना होता है। सोलो ट्रैवलिंग में इस तरह के हालात कई बार आ सकते हैं। इसे जीवन की ट्रेनिंग समझ लीजिए।

यह दुनिया बहुत बड़ी है और कई रंग लिए हुए। जरूरी नहीं कि कहीं चलने के लिए आपको सही साथी मिल ही जाए। तो, इंतजार में किसी के कब तक बैठा जाए। अगर लॉरा ने सही वक्त और सही साथी का इंतजार किया होता, तो क्या वह देख पातीं कि अरब में गर्म हवा किस तरह रेत के बवंडर बनाती है या फिर लाल सागर का नीला पानी कितना खूबसूरत लगता है? अगर सही वक्त के लिए रुकते तो क्या राहुल सांकृत्यायन के पास 'अथातो घुमक्कड़ जिज्ञासा' के लिए वक्त बच पाता?

अनजानापन हमें डराता है और यह अनदेखा संसार अनजानी चीजों से भरा पड़ा है। लेकिन, जब तक निकलेंगे नहीं, तब तक जानेंगे कैसे? परिचय कैसे होगा अनजाने से? यात्रा घर से दूर जाना नहीं, बल्कि सच के करीब आना है। सोलो ट्रैवलिंग में हमारे पास पूरा समय होता है खुद से बात करने का। अपनी क्षमताओं, कमजोरियों, इच्छाओं और सपनों को समझने का। अपने बारे में समझ साफ हो जाए, तो बहुत कुछ आसान हो जाता है।

शेयर करें अपने अनुभव

जीवन की दिनचर्या के अनुभवों में आप कैसे आनंद महसूस करते हैं, हमें बताएं **nbtreader@timesgroup.com** पर, और सब्जेक्ट में लिखें-**'जीवन आनंद'**

THE SPEAKING TREE

और पढ़ने के लिए देखें

hindi.speakingtree.in

Original बने रहने में ही जीवन का सच्चा सुख

निर्मल जैन

अपने लिए हमें कपड़ा pure cotton या pure silk ही चाहिए। घी देसी, शुद्ध दूध, पानी और सभी खाद्य सामग्री पूर्ण गुणवत्ता और मर्यादा की होनी चाहिए। सारे उपकरण भी 'original' हों। जब हमें अपने लिए सब कुछ शुद्ध और original ही चाहिए, तो हमसे भी उम्मीद की जा सकती है कि हम भी अपने आपको अपने मौलिक स्वरूप (original और genuine) में ही प्रस्तुत करें। हमारे स्वभाव, विचारों में कोई बनावट या मिलावट न हो।

सबकी अपनी एक अनोखी मौलिकता होती है। यह मौलिकता ही हमारी सफलता का पहला कदम है। सबसे बड़ी दिक्कत यह है कि हम अपनी natural originality को हमेशा बनाए नहीं रखते। कभी मन की कल्पनाओं के हिसाब से काम करते हैं, या लोगों से व्यवहार करते हैं। कभी दूसरों की देखा-देखी अपने आपको इतना अधिक बदल डालते हैं कि हमारा मूल स्वरूप ही पूरी तरह खत्म हो जाता है। किसी दूसरे के घोड़े पर सवार होने वाले को देर-सबेर उससे उतरना ही पड़ता है और घोड़े को वापस उसके मालिक को सौंप देना होता है। पराए विचारों पर अपनी जीन मत कसिए, अपने लिए original thought खोजिए।

न जाने किस भ्रम में हमने अपनी मौलिकता, अपनी खूबी और ज्ञान को अधूरा मानकर पश्चिमी शिक्षा-दीक्षा और चकाचौंध को महान सत्य समझ लिया है। फिर अपनी दिशा और नजर छोड़कर दूसरों के चश्मे से संसार को देखना शुरू कर दिया है। अपनी natural originality को त्यागकर western culture से जुड़ते जा रहे हैं। इससे कर्म का सिद्धांत खो गया और भोग का नजरिया इतना हावी हो गया कि हमने भौतिक विकास को ही असली विकास मान लिया।

हम जैसे हैं, वैसे ही रहें, वैसे ही दिखें। जितना हम बनावट और दिखावट से दूर रहेंगे, उतना सुखी महसूस करेंगे। अंदरूनी खुशी साधनों-सुविधाओं से नहीं, बल्कि अच्छे विचार और जीने के सरल अंदाज से आती है। हमारा जीवन जितना सरल होगा, हमारे आसपास की दुनिया उतनी ही आसान हो जाएगी। दुनिया तभी तक कठिन है जब तक हम जटिल हैं। सादगी से प्रकृति और अपने आसपास के लोगों को समझना आसान हो जाता है।

हवा के साथ बहना सीखें। पंछियों के साथ गीत गाएं। जमीन पर नंगे पांव चलते हुए महसूस करें कि हम ही पूरी धरती हैं। हम जितने हैं, उतने में खुद को पूरा मानना ही आजादी है। जीवन की सारी दौड़ केवल extra के लिए ही है। अतिरिक्त पैसा, पहचान, शोहरत, इज्जत- अगर यह extra पाने का लालच न हो, तो जीवन एकदम निश्छल और मौलिक स्वरूप धारण कर लेगा।

जीवन की भागमभाग, महान और अमर होने की कोशिश। इनको छोड़ अगर हम सहज रूप में जिएं, भूत या भविष्य की ओर देखने के बजाए वर्तमान को सुंदर और सार्थक बनाएं तो जीवन शायद ज्यादा उपयोगी हो जाएगा। व्यवहार में जितनी सादगी होगी, जितनी सरलता होगी, लोग हमारे उतने ही करीब आएंगे। हमारा साधारण, सहज, सरल और शांत होना ही अपने आप में बहुत असाधारण उपलब्धि है।

शिखर पर चढ़कर कैसा लगता है

मृत्युंजय राय

वो देखो, हिमालय की रेंज। कहां? वो जो पहाड़ की चोटी पर बर्फ दिख रही है, उंगली के इशारे से सिक्किम यात्रा के दौरान ड्राइवर के साथ गाइड की भूमिका निभा रहे सुनील राई ने मुझे दिखाया था। पहला तजुर्बा था हिमालय को देखने का, भले ही दूर से ही सही। हिमालय का यह भौतिक अनुभव था, जिसका अपना एक आध्यात्मिक संसार भी है। जिसने ना जाने कितने लोगों को इस आस में अपने यहां बुलाया है कि वहां जाकर वे खुद को समझ लेंगे।

AI Image

विचार विंडो

मगर खुद को समझने के लिए और अपनी इच्छाओं पर विजय पाते हुए मंजिल तक पहुंचना हिमालय को सिर्फ आध्यात्मिक जगत से ही नहीं जोड़ता। भौतिक दुनिया में ऐसा ही सबक पर्वतारोहियों को भी हिमालय देता है। तभी तो एडमंड हिलेरी और तेनजिंग नॉरगे के 1953 में माउंट एवरेस्ट पर कदम रखने को इतनी बड़ी उपलब्धि माना गया। उससे पहले 145 पर्वतारोही इस काम में नाकाम हो चुके थे। 1924 में तो ब्रिटिश पर्वतारोहियों की एक टीम एवरेस्ट से सिर्फ 250 मीटर दूर रह गई थी, लेकिन दो सदस्यों के लापता होने के कारण उन्हें शिखर पर कदम रखे बगैर लौटना पड़ा। मगर वक्त के साथ हिमालय पर जीत पाना आसान होता गया है।

1994 से 2003 के बीच जितने लोग एवरेस्ट को जीतने पहुंचे, उनमें से 24% को कामयाबी मिली। यह पिछले दशक के मुकाबले कामयाबी की दोगुनी दर है। 2004 से 2013 के बीच तो कामयाबी की दर 51% हो गई। इसके बाद इसमें और बढ़ोतरी हुई है। यह कमाल है तकनीक का। जिस तरह से दुनिया के बाकी काम तकनीक ने आसान किए हैं, वैसे ही पर्वतारोहियों का जीवन भी इससे आसान हुआ है। ऑक्सिजन टैंक की क्षमता पहले से दोगुनी हो चुकी है। सूट और ग्लव्स हाई क्वॉलिटी के होते हैं और डबल इंसुलेटेड बूट्स पर्वतारोहियों के पांव गर्म रखते हैं। मौसम की सटीक भविष्यवाणी से भी पर्वतों की मुश्किल चढ़ाई आसान हुई है। इन सबके बावजूद पर्वतारोहण एक मुश्किल चीज है। मुश्किल इस कदर कि इसे पुरुषों का शगल बताया जाता रहा है। 'Time on Rock' इस भ्रम को दूर करने की पहल करती है। इस किताब को लिखा है Anna Fleming ने। एक तरह से किताब उनकी पर्वतारोहण के जीवन से रीडर्स को रूबरू कराती है। किस तरह से पहले पहल जब उन्होंने पहाड़ों पर चढ़ने का प्रयास शुरू किया तो उन पर क्या गुजरती थी। अंदर क्या चलता था। और किस तरह 30 की उम्र पार करते-करते वह चैंपियन पर्वतारोही बन गईं। कैसे यह स्पोर्ट किसी इंसान को पर्वतों के मोहपाश में बांध देता है, यह जानकारी भी Anna Fleming के जरिये रीडर्स तक पहुंचती है। वह बताती हैं कि कैसे यह उनके लिए एक शौक के रूप में शुरू हुआ और फिर उनकी जिंदगी के केंद्र में आ गया।

Anna Fleming की किताब यह तो बताती ही है कि पुरुषों के दबदबे वाले पर्वतारोहण में एक महिला पर्वतारोही होने का क्या मतलब है, साथ ही वह अलग-अलग चट्टानों की खूबियों से भी रीडर्स को वाकिफ कराती हैं। वह लिखती हैं कि दूर से देखने पर जो चट्टान एक जैसे लगते हैं, पास जाकर पता चलता है कि वे एक दूसरे से कितने अलग हैं। और कैसे ये चट्टान ही पर्वतारोही को मंजिल तक पहुंचाने का जरिया बनते हैं। Anna Fleming यह भी बताती हैं कि किसी पर्वत से शिखर तक पहुंचना एक क्षण की खुशी का सबब नहीं होता। मंजिल तक पहुंचने से पहले आप जिस प्रॉसेस से गुजरते हैं, वह एक अनूठा अहसास दिलाता है। Anna Fleming जैसे लोगों के लिए यहां भौतिक जगत आध्यात्मिक संसार से मिलता है।

'कोयता' की मार

प्रणव प्रियदर्शी

महाराष्ट्र के मराठवाड़ा क्षेत्र में बाल विवाह का एक नया रूप चलन में है, जो इस मायने में पहले से ज्यादा क्रूर है कि इसमें कम उम्र की लड़कियों पर घर-परिवार की ही जिम्मेदारी नहीं पड़ती, गन्ने के खेतों और मिलों में काम का बोझ भी वहन करना पड़ता है। इसे 'गेट कैन वेडिंग' कहा जा रहा है क्योंकि इसका गहरा नाता गन्ने की फसल की कटाई से है।

AI Image

पिछले दिनों आई यूनिवर्सिटी ऑफ कैंब्रिज सेंटर फॉर जेंडर स्टडीज से जुड़ी रीतिका सुब्रमण्यम की एक रिपोर्ट इस चलन के अलग-अलग पहलुओं पर विस्तार से रोशनी डालती है। यह शादी अमूमन गुपचुप ढंग से और जल्दबाजी में की जाती है। इस इलाके में सामान्य पारंपरिक शादी में लगभग ढाई लाख रुपये का खर्च आता है जबकि इस रीति में शादी 10 हजार रुपये में निपट जाती है। दूसरी बात यह कि इस शादी के लिए करीब एक लाख रुपये अडवांस में मिल जाते हैं। शादी के ठीक बाद यह कपल संयुक्त रूप में गन्ने के खेतों में काम करके इस रकम की सूद समेत भरपाई करता है। ऐसे कपल को यहां 'कोयता' कहते हैं, जिसका शाब्दिक मतलब वह हंसिया है जिससे गन्ने की कटाई की जाती है। इस सबके केंद्र में होता है मुकादम जो खेत-मजदूरों में ठेकेदार और स्थानीय ग्रामीण समाज में जोड़े बनाने वाले (मैचमेकर) की दोहरी भूमिका निभाता है। अपने शरीर और मन के साथ हर जुल्म बर्दाश्त करती लड़कियों की कीमत पर यह प्रथा जारी है। मगर कई बार अपवाद भी यह संकेत देते हैं कि नियम की जंजीरें कसमसाती आकांक्षाओं की भेंट चढ़ने वाली हैं। ऐसा ही एक अपवाद बनी ज्योति, जिसने खुद इस प्रथा का शिकार होने के बाद ठान लिया कि अपनी छोटी बहन मनीषा को इससे हर कीमत पर बचाएगी। परिवार, समाज और प्रशासन तीनों स्तरों पर सही सोच के लोगों के सहयोग से ज्योति ने यह सुनिश्चित किया कि थोरात परिवार की छठी बेटी की शादी 18 साल की होने के बाद और पारंपरिक ढंग से हो और उसे 'कोयता' की चोट न सहन करनी पड़े।

आधी दुनिया

रीडर्स मेल

www.edit.nbt.in

हक की है ये लाइन

20 मई को प्रकाशित लेख 'देश में सब बराबर, बताती है वोटिंग लाइन' पढ़ा। भारत में वोटिंग लाइन लोकतंत्र के मूल्य को बखूबी दर्शाती है। लंबी कतारों में खड़े लोग धूप की परवाह न करते हुए अपने मताधिकार का उपयोग करने के लिए बेसब्री से इंतजार करते हैं। ये कतारें सिर्फ वोट डालने की नहीं, बल्कि अपने हक और अपने भविष्य को सुरक्षित रखने के लिए लगती हैं। इन कतारों में खड़े लोग जानते हैं कि उनका वोट ही उनकी आवाज है, उनकी ताकत है, उनकी भागीदारी है। ये वोट उनके अधिकारों को बचाएंगे, उनके विकास में योगदान देंगे, और उन्हें एक बेहतर भविष्य देंगे।

रश्मि खरे, अंकुर विहार

भविष्य के भागीदार

जीवन आनंद कालम में 20 मई को प्रकाशित जॉर्ज बर्नार्ड शॉ का यह कथन कि जब आप मतदान नहीं करते तो शिकायत करने का अधिकार खो देते हैं, लोकतंत्र की सचाई उजागर करता है। मतदान सिर्फ एक अधिकार नहीं, बल्कि एक जिम्मेदारी है जो हमें अपने भविष्य को आकार देने का मौका देती है। जब हम मतदान करते हैं, तो इसका अर्थ है कि हम अपनी आवाज उठाते हैं, अपने विचार प्रकट करते हैं, और अपने देश के भविष्य को आकार देने में भागीदार बनते हैं।

जीवन आनंद

सोना मौर्या, लक्ष्मी नगर

एशिया में बढ़ता तनाव

25 मई का संपादकीय 'चीन के क्या हैं इरादे' पढ़ा। ताइवान में नए राष्ट्रपति के आने के बाद चीन के सैन्याभ्यास को लेकर तनाव का माहौल है। इस मसले पर जाहिर है कि अमेरिका भी चुप नहीं बैठने वाला। चीन का यह कदम अंतरराष्ट्रीय समुदाय में तनाव पैदा कर सकता है। आसपास के देश भी इस घटना से प्रभावित हो सकते हैं और अपनी सुरक्षा के लिए कदम उठा सकते हैं। यह स्थिति बहुत ही नाजुक है और इसमें सावधानी की आवश्यकता है।

शोभित खन्ना, राजौरी गार्डन

nbtedit@timesgroup.com पर अपनी राय नाम-पते के साथ मेल करें।

अंतिम पत्र

घूमने के लिए गूगल मैप का कर रहे थे इस्तेमाल, नदी में जा गिरी कार– एक खबर

किस्मत अच्छी थी कि गूगल मैप ने खाई में गिरने से बचा लिया!

कौशल जायसवाल

आर.एन.आई. नं. 510/57© सर्वाधिकार सुरक्षित। लिखित अनुमति के बिना संपूर्ण या आंशिक पुनर्प्रकाशन पूर्णतः प्रतिबंधित। स्वत्वाधिकारी बैनेट, कोलमैन एण्ड कम्पनी लिमिटेड के लिए राजीव यादव द्वारा, 7 बहादुरशाह जफर मार्ग, नई दिल्ली-110002 से प्रकाशित तथा **टाइम्स ऑफ इंडिया प्रेस, साइट IV, औद्योगिक क्षेत्र साहिबाबाद** और प्लॉट नंबर 7-8, सेक्टर M-11, ट्रांसपोर्ट हब, इंडस्ट्रियल मॉडल टाउनशिप, मानेसर, हरियाणा से मुद्रित। फोन : 23302000 फैक्स: 23492047, पंजीकृत कार्यालय : दादाभाई नौरोजी रोड, मुंबई-400001। विमान सेवा शुल्क : 1 रु. प्रति कॉपी। नेपाल में कुल मूल्य : सोमवार से शनिवार : नेपाली 5 रु. ; रविवार : नेपाली 6 रु.
संपादक (दिल्ली मार्केट) : आशीष पांडे (इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अन्तर्गत उत्तरदायी)

प्रवाह

महोत्सव विश्वास का | 75 | निर्भीक पत्रकारिता का आठवां दशक | स्थापना वर्ष : 1948

मैं किसी भी समुदाय की तरक्की को महिलाओं की तरक्की से मापता हूं। -डॉ. भीमराव आंबेडकर

राजकोट के गेम जोन और पूर्वी दिल्ली के बच्चों के एक अस्पताल में अग्निकांड के जो ब्योरे सामने आ रहे हैं, वे हृदयविदारक तो हैं ही, इसलिए भी अधिक कष्टकारी हैं कि एक तो यह मानवीय लापरवाही के परिणाम हैं और दूसरे, यह भी दर्शाते हैं कि हम अपनी गलतियों से सबक नहीं लेते।

गलतियों से कब सीखेंगे

गुजरात के राजकोट शहर में टीआरपी गेमिंग जोन में भीषण आग लगने से बारह बच्चों समेत कम से कम तैंतीस लोगों की मौत की बेहद दुखद व दुर्भाग्यपूर्ण खबर से देश उबर भी नहीं सका था कि तभी पूर्वी दिल्ली के बच्चों के एक अस्पताल में भीषण आग लगने से सात नवजात शिशुओं की मौत की एक दूसरी खबर ने देश को झकझोर कर रख दिया। बताया जा रहा है कि राजकोट में लकड़ी, टिन और थर्माकोल की अस्थायी संरचनाओं से बनाए गए विशाल मनोरंजन पार्क में आग तब लगी, जब वेल्डिंग का कुछ काम हो रहा था। गुजरात उच्च न्यायालय ने यह पुष्टि भी की कि जहां आग लगी थी, वहां पेट्रोल, फाइबर और फाइबर ग्लास शीट जैसी अत्यधिक ज्वलनशील चीजों को जमा किया गया था। नतीजा यह हुआ कि महज तीस सेकंड में ही पूरा गेम जोन भीषण आग की चपेट में आ गया। छुट्टी वाले दिन टिकट की दरों में रियायत की वजह से वहां पहुंची भारी भीड़ से स्थिति ज्यादा विकट हो गई। दूसरी तरफ, दिल्ली के अस्पताल में लगी आग को लेकर पुलिस का कहना है कि अस्पताल के पास खड़ी किसी एंबुलेंस में ऑक्सीजन भरी जा रही थी, तभी सिलेंडर फट गया, हालांकि स्थानीय लोगों का आरोप है कि अस्पताल के नीचे काफी समय से अवैध ढंग से ऑक्सीजन सिलेंडर का कारोबार चल रहा है। गुजरात और दिल्ली के मामलों से दो बातें स्पष्ट हैं। पहली, ये हादसे मानवीय लापरवाही का ही नतीजा हैं और दूसरी यह कि हम अपनी गलतियों से सबक नहीं सीखते। करीब पांच साल पहले सूरत में जो तक्षशिला कोचिंग हादसा हुआ था, जिसमें इमारत में लगी आग से बचने के लिए बच्चे खिड़कियों से कूदने लगे थे और बाईस बच्चों की मौत हुई थी, उस वक्त भी व्यवस्थाओं को कसने के तमाम इरादे जताए गए थे। लेकिन जैसा गुजरात उच्च न्यायालय ने भी संज्ञान लिया है कि ऐसे गेम जोन के निर्माण में अब भी कानूनी निर्देशों का पालन नहीं किया जा रहा। दरअसल, अग्नि सुरक्षा को लेकर

विभिन्न राज्यों के कानूनों के बीच काफी भिन्नता है। केंद्रीय गृह मंत्रालय ने 2019 में एक मॉडल फायर ऐक्ट जारी किया, जिससे राज्य सरकारों द्वारा अपनाने के प्रावधानों को मानकीकृत करने की उम्मीद की गई थी। लेकिन अफसोस की बात है कि ज्यादातर राज्यों ने अब तक ऐसा नहीं किया है। राजकोट हादसे में क्षत-विक्षत शवों का मिलना और दिल्ली में नवजातों का झुलसना वाकई हृदयविदारक है, जिसकी जांच तो खैर हो ही रही है, लेकिन इन कवायदों का तभी मतलब है, जब दोषियों को कड़ा दंड मिले और गलतियों से सबक भी लिया जाए, ताकि भविष्य में ऐसे हादसे दोबारा न हों।

'गंभीर' रोग का खतरनाक उपचार

प्रधानमंत्री मोदी ने मुस्लिम आरक्षण की सांविधानिक वैधता पर जो आशंका व्यक्त की थी, कलकत्ता उच्च न्यायालय ने उस पर मुहर लगाई है। मुस्लिम समाज में व्याप्त समस्याओं से इन्कार नहीं, लेकिन ममता, राहुल और लालू सरीखे जिस तरह इसका उपचार कर रहे हैं, वह विकराल बीमारियों को ही पैदा करेगा।

लोकसभा चुनाव अभियान के दौरान प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी मुस्लिम आरक्षण की सांविधानिक वैधता पर जो आशंका व्यक्त कर रहे हैं, उस पर कलकत्ता उच्च न्यायालय ने मुहर लगा दी। 22 मई को अदालत ने पश्चिम बंगाल में वर्ष 2010 के बाद मुस्लिमों को अन्य पिछड़ा वर्ग (ओबीसी) आरक्षण के तहत जारी प्रमाणपत्रों को असांविधानिक बताकर रद्द कर दिया। यह पहली बार नहीं है, जब किसी राजनीतिक दल ने स्थापित आरक्षण व्यवस्था में डाका डालकर सभी मुसलमानों को गरीब-वंचित बताकर अवैध आरक्षण देने का प्रयास किया है। आखिर बार-बार ऐसी कोशिशें क्यों हो रही हैं?

बलबीर पुंज
भाजपा के पूर्व उपाध्यक्ष एवं पूर्व राज्यसभा सदस्य

इसका उत्तर न्यायमूर्ति तपब्रत चक्रवर्ती और न्यायाधीश राजशेखर मंथा की खंडपीठ द्वारा व्यक्त टिप्पणी में मिल जाता है। उनके अनुसार, 'मुसलमानों के कुछ वर्गों को 'राजनीतिक उद्देश्यों के लिए' ओबीसी आरक्षण दिया गया। जिन मुस्लिम वर्गों को आरक्षण दिया गया, उन्हें राज्य की सत्तारूढ़ व्यवस्था ने एक वस्तु और 'वोटबैंक' के रूप में इस्तेमाल किया। यह संविधान और लोकतंत्र का अपमान है।' इस निर्णय को प्रदेश की मुख्यमंत्री और तृणमूल कांग्रेस प्रमुख ममता बनर्जी ने मानने से इन्कार कर दिया है। आखिर इसका कारण क्या है?

पश्चिम बंगाल की वर्तमान आबादी 10 करोड़ से अधिक है, जिसमें सात करोड़ हिंदू और 2.7 करोड़ मुसलमान हैं। लोकनीति-सीएसडीएस के अनुसार, 2021 के विधानसभा चुनाव में 75 प्रतिशत मुस्लिम मतदाताओं ने तृणमूल के पक्ष में मतदान किया था, जो 2016 में 51 प्रतिशत था। यहां की 42 लोकसभा सीटों में से 13 में मुस्लिम आबादी 32-64 प्रतिशत तक है, जबकि 20 सीटों पर हिंदुओं की आबादी 35-50 प्रतिशत है। विभाजन के बाद पश्चिम बंगाल में मुसलमानों की आबादी तेजी से बढ़ रही है। 1951 की जनगणना में प्रदेश की कुल जनसंख्या 2.63 करोड़ थी, जिसमें मुस्लिम 50 लाख, यानी 19 प्रतिशत थे। वर्ष 2011 की जनगणना में उनकी आबादी बढ़कर ढाई

करोड़ से अधिक, यानी 27 प्रतिशत हो गई। वर्तमान आंकड़ा वर्ष 1941 में संयुक्त बंगाल की मुस्लिम आबादी–29.5 प्रतिशत के काफी निकट है। यहां अविभाजित बंगाल में वर्ष 1946 के प्रांतीय चुनाव का स्मरण करना आवश्यक है, क्योंकि तब इस क्षेत्र के 95 प्रतिशत मुस्लिम मतदाताओं ने मुस्लिम लीग को वोट देकर पाकिस्तान का समर्थन किया था। तब केवल बंगाल ही नहीं, देश के तत्कालीन प्रांतों (असम, बिहार, उत्तर प्रदेश, बॉम्बे, पंजाब, ओडिशा, मद्रास सहित), जो आज खंडित भारत का हिस्सा हैं, वहां भी 80 से 100 प्रतिशत मुस्लिमों ने मुस्लिम लीग का साथ दिया था। इस पूरे प्रपंच में वामपंथियों और ब्रितानियों की बड़ी भूमिका रही थी।

भारत के विभाजन का आधार तथाकथित सामाजिक-आर्थिक शोषण नहीं, अपितु सर सैयद अहमद खां द्वारा प्रदत्त और 'काफिर-कुफ्र' अवधारणा से प्रेरित 'दो राष्ट्र सिद्धांत' था। इसमें मजहबी कारणों से हिंदुओं के साथ मुस्लिमों के 'सह-अस्तित्व' को असंभव और अकल्पनीय बताया गया था। दिलचस्प है कि जो मुस्लिम नेता इसका समर्थन करते थे, उनमें से कई विभाजन के बाद कभी देश छोड़कर ही नहीं गए और कांग्रेस में शामिल होकर एकाएक 'सेक्यूलर' बन गए। इन्हीं में से 28 मुस्लिम नेता भारतीय संविधान सभा के सदस्य भी बन गए। इसी मुस्लिम समूह की ओर से जब खंडित भारत में मुसलमानों के लिए पृथक निर्वाचक मंडल की मांग हुई, तब सरदार पटेल ने 28 अगस्त, 1947 को कहा था, 'यदि वही ढंग फिर अपनाया गया, जो देश विभाजन के लिए अपनाया गया था, तो मैं यह कहूंगा... उनके लिए यहां कोई जगह नहीं।' मुस्लिम वोटबैंक के लिए स्वघोषित सेक्यूलर दलों द्वारा कट्टरपंथी मुसलमानों को तुष्ट करना कितना घातक है, यह गांधीजी द्वारा खिलाफत आंदोलन का समर्थन किए जाने से स्पष्ट है। तब मजहबी कारणों से अधिकांश मुसलमान स्वतंत्रता आंदोलन से कटे हुए थे। उन्हें ब्रितानियों के खिलाफ एकजुट करने हेतु गांधीजी ने उस घोर मजहबी और कट्टरपंथी खिलाफत आंदोलन का नेतृत्व किया, जिसका भारतीय मुस्लिमों से कोई संबंध नहीं था। गांधीजी की सोच थी कि इससे राष्ट्रीय एकता और स्वराज्य को बल मिलेगा। परंतु मुस्लिम कट्टरपंथियों ने इसे भारत में इस्लामी वर्चस्व की पुनर्वापसी का उपक्रम बना लिया। अंततोगत्वा, पाकिस्तान का जन्म हुआ।

क्या स्वतंत्रता के बाद खंडित भारत में इस मजहबी तुष्टीकरण पर लगाम लगी? नहीं। जब सामाजिक सुधार हेतु 1955-56 में हिंदू कोड बिल लाया गया, तब मुस्लिम समुदाय को उनकी मजहबी मान्यताओं (हलाला-तीन तलाक सहित) के साथ छोड़ दिया गया। जब 1985-86 में सर्वोच्च न्यायालय ने शाहबानो मामले में मुस्लिम महिलाओं को मध्यकालीन मानसिकता से बाहर निकालने वाला फैसला सुनाया, तब कट्टरपंथियों के हिंसक प्रदर्शन और 'इस्लाम खतरे में है' के उद्घोष के आगे नतमस्तक होते हुए तत्कालीन राजीव सरकार ने संसद में बहुमत के बल पर अदालत का निर्णय पलट दिया। वर्ष 2006 में तत्कालीन प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने बड़ी चतुराई से राष्ट्रीय संसाधनों पर मुसलमानों का पहला हक बता दिया। तब देश में होने वाले आतंकवादी हमलों के बीच इस्लामी कट्टरता को परोक्ष स्वीकृति देने या न्यायोचित ठहराने हेतु फर्जी-मिथक 'हिंदू/भगवा आतंकवाद' को स्थापित करने और हिंदू-विरोधी 'सांप्रदायिक विधेयक' को पारित करने का भी विफल प्रयास हुआ था। इसी विभाजनकारी उपक्रम का अगला लक्ष्य सांप्रदायिक आधार पर मुस्लिम आरक्षण/कोटा/सब-कोटा देना है।

यह ठीक है कि मुस्लिम समुदाय में आज भी बहुसंख्यक हिंदुओं के साथ शेष अल्पसंख्यकों (सिख, ईसाई, पारसी आदि) की तुलना में शिक्षा और गरीबी की समस्या अधिक है। परंतु इसका समाधान उनके समाज के भीतर ही है। मुस्लिम समूह के बड़े हिस्सा का राष्ट्रीय चेतना, सह-अस्तित्व और आधुनिकता से सरोकार सीमित है। इसका बड़ा कारण मदरसा शिक्षण पद्धति है, जिसमें 'इको-सिस्टम' इस्लाम और संबंधित पहचान से ओतप्रोत रहता है। इसलिए मदरसों में अधिकांश पढ़ने-पढ़ाने वालों का दृष्टिकोण, विचार, पहचान और सपने शेष समाज से भिन्न होते हैं। मुस्लिम समाज में व्याप्त अशिक्षा और गरीबी के रोग से किसी को इन्कार नहीं। परंतु इस दिशा में ममता बनर्जी, राहुल गांधी और लालू यादव जिस प्रकार का उपचार कर रहे हैं या करना चाहते हैं, वह दूसरी विकराल बीमारियों को ही पैदा करेगा।

edit@amarujala.com

जीवन धारा

रूमी

नदी जब सागर से मिलने के लिए निकलती है, तो उसे रास्ते में चट्टानों समेत कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है, लेकिन वह अपना लक्ष्य नहीं बदलती। बड़ी चीज की खोज में बाधाएं तो आती ही हैं।

जीवन एक संगीत है और हम सब इसके सुर

ऋतु परिवर्तन को देखिए। वसंत ऋतु के आगमन पर बर्फ की पकड़ ढीली पड़ने लगती है। बगीचों में फूलों की बहार आ जाती है। इसके बाद ये फूल भी मुरझाने लगते हैं। हम सब भी क्षणभंगुर फूल हैं, कुछ जीवंत रंगों वाले, कुछ अधिक सूक्ष्म। फिर भी, सभी समग्र की सुंदरता में योगदान करते हैं। मैंने ईश्वर को उस प्रेमी की तरह खोजा है, जो अपनी प्रियतमा के लिए तरसता है। इसके लिए अनेक वर्ष बिता दिए। इसी खोज के जरिये मैं जीवन और आत्मा के रूप को समझ सका। हम सब भौतिक संसार की मिट्टी में समाई हुई संभावनाओं की पवित्र लपटों के रूप में पैदा हुए हैं। हमारी इंद्रियां एक पर्दे की तरह हैं, जिसने अंदर जलने वाली दिव्य रोशनी को ढक रखा है। जीवन इन्हीं पर्दों को हटाने की प्रक्रिया है। इन्हें हम प्रेम के माध्यम से हटा सकते हैं। यह प्रेम ईश्वर के प्रति, मानवता के प्रति, अपने अस्तित्व के प्रति हो। किंतु प्यार को आराम की वस्तु समझने की गलती न कीजिए।

दरअसल हमारा काम प्यार को ढूंढना नहीं है, अपितु अपने भीतर की उन सभी बाधाओं को ढूंढना है, जो आपने इसके खिलाफ बना रखी हैं। अब एक बीज के बारे में सोचें। जब बीज जमीन के अंदर अंधेरे में दबा होता है, तो वह प्रकाश की ओर प्रस्फुटित होने के लिए शुरुआत में कई दबाव झेलता है। उसे काफी कठिनाई भी होती है, लेकिन लगातार प्रयास से वह ऐसी कोई दरार बना लेता है, जिससे अंकुरित होकर बाहर आ जाता है। ऐसा ही हमारे साथ भी होता है। ईश्वर प्राप्ति की राह में शुरुआत में तमाम बाधाओं का सामना करना पड़ता है। लेकिन इनसे डरना नहीं चाहिए, बल्कि इन्हें अवसरों के रूप में स्वीकार करना चाहिए। प्रत्येक संघर्ष एक छेनी की तरह है, जो हमारी क्षमता के कच्चे पत्थर को दिव्य प्रकाश के बर्तन में आकार देती है। जब हम बड़ी चीज की खोज में निकलते हैं, तो रास्ते में तमाम बाधाएं आती हैं। हमें इन बाधाओं से निराश नहीं होना चाहिए। मेरा तो मानना है कि कठिनाई की भट्ठी में तपकर ही असली स्वरूप प्रकट होता है।

इसके लिए नदी हमारे लिए सबसे अच्छा उदाहरण है। नदी सागर से मिलने के लिए जब निकलती है, तो उसे न जाने कितनी बाधाओं का सामना करना पड़ता है। उसके रास्ते में चट्टानें आती हैं। कई बार वह खुद नहीं आगे बढ़ पाती, तो दूसरी नदियों के साथ मिल जाती है, लेकिन वह अपनी मंजिल को कभी नहीं भूलती। निरंतर बहते हुए एक दिन सागर में ही समा जाती है। हमें भी वैसा ही करना और सीखना है। इसके लिए आसक्ति को त्यागना होगा, यह हमारे रास्ते की बहुत बड़ी चट्टान है। इससे चिपके रहने से दुख ही मिलता है। इसके उलट हमें सच्ची वास्तविकता को अपनाना सीखना होगा। जीवन एक संगीत है। हम सब इसके सुर हैं। कोई धीमा, तो कोई तेज है। सभी सुरों के मिलने से एक प्यारी-सी धुन बनती है। इसी धुन में हमें अपनी लय को खोजना है, जो सर्वोच्च सत्ता से मिला सके।

मौत अंत नहीं

सूत्र

सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि हमें जीवन के असली आनंद को खोजना है। इसके लिए खुलकर नाचना चाहिए। बारिश में नाचें, खुले दिल से हंसें, पके अंजीर की मिठास का आनंद लें। ये सभी आपके माध्यम से प्रवाहित होने वाली दिव्यता की अभिव्यक्तियां हैं। जीवन केवल कठिनाई सहने के बारे में नहीं है, बल्कि अस्तित्व के उपहार का जश्न मनाने के बारे में है। मौत भी अंत नहीं। यह तो एक परिवर्तन मात्र है।

दूसरा पहलू

मैक्सिको सिटी में जल संकट इतना भीषण है कि अगले महीने होने वाले चुनाव के लिए पानी प्रमुख मुद्दा बनकर उभरा है।

जब मैक्सिको सिटी में बंद हो जाएगी जलापूर्ति

जलवायु परिवर्तन, बढ़ती शहरी भीड़ और दयनीय ढांचागत विकास के कारण मैक्सिको सिटी में जल संकट भीषण रूप लेता जा रहा है। वहां भूमिगत जल तेजी से गायब हो रहा है। मैक्सिको सिटी के एक महत्वपूर्ण जलाशय में जलस्तर इतना नीचे चला गया है कि उससे जलापूर्ति नहीं होती। पिछला वर्ष मैक्सिको में विगत सत्तर वर्षों में सबसे गर्म वर्ष के रूप में आंका गया। हम इसलिए भुगत रहे हैं, क्योंकि यह शहर बहुत तेजी से बढ़ रहा है, जिसे अब रोका नहीं जा सकता, 64 साल के गैब्रियल मार्टिनेज कहते हैं। वह 600 परिवारों के जिस अपार्टमेंट में रहते हैं, उसमें पानी का भीषण संकट है। अगले महीने होने वाले चुनाव में जल संकट सबसे बड़े मुद्दे के रूप में उभरा है। मैक्सिको सिटी के कई इलाके ऐसे हैं, जहां नलों से जलापूर्ति नहीं होती। कामकाजी वर्ग के बड़े इलाके में, जहां की आबादी करीब 18 लाख है, पानी के लिए लोग प्रशासन के टैंकरों पर निर्भर हैं। ये टैंकर पहले चार दिन बाद आते थे, लेकिन अब बहुत दिनों के अंतराल पर पहुंचते हैं।

जेम्स वैग्नर

मैक्सिको सिटी के कई इलाके ऐसे हैं, जहां नलों से जलापूर्ति नहीं होती। करीब 18 लाख आबादी पानी के प्रशासन के टैंकरों पर निर्भर है। ये टैंकर भी कई दिनों में आते हैं।

पिछले सौ वर्षों में मैक्सिको सिटी का औसत तापमान तीन डिग्री सेल्सियस बढ़ा है, जो वैश्विक तापमान में औसत वृद्धि के दोगुने से भी अधिक है। वर्ष 2020 के अध्ययन के मुताबिक, शहर के कुछ हिस्सों में अत्यधिक गर्म दिनों (30 डिग्री से अधिक तापमान) की संख्या दोगुने से भी ज्यादा हो गई है। इसकी एक वजह जलवायु परिवर्तन का असर है, तो दूसरी वजह है पेड़ों और जलस्रोतों की जगह कंकरीट की बड़ी-बड़ी इमारतों का निर्माण। गर्मी बढ़ने से पानी की जरूरत बढ़ी है, लेकिन बढ़ते तापमान से वाष्पीकरण भी बढ़ा है। पूरी दुनिया में बोतलबंद पानी का सबसे बड़ा बाजार मैक्सिको है, रॉबर्टो कॉन्सटैंटिनो टोटो कहते हैं, जो मैक्सिको सिटी में वाटर रिसर्च ऑफिस के प्रमुख हैं।

पिछले सौ वर्षों में मैक्सिको सिटी का औसत तापमान तीन डिग्री सेल्सियस बढ़ा है, जो वैश्विक तापमान में औसत वृद्धि के दोगुने से भी अधिक है। जलस्रोतों की जगह कंकरीट की बड़ी-बड़ी इमारतों का निर्माण हो गया है।

अमूमन जून से नवंबर तक, वर्षा ऋतु में मैक्सिको सिटी की पानी की जरूरतें पूरी हो जाती थीं। पिछले कुछ वर्षों से बारिश कम हो रही है। क्यूटज्मला वाटर सिस्टम, जो बांधों, नहरों और पाइप्ड वाटर का विशालतम नेटवर्क है, और जो मैक्सिको सिटी में 27 फीसदी पानी की आपूर्ति करता है, अपनी सामान्य क्षमता से 30 प्रतिशत कम है। अधिकारियों का आकलन है कि 26 जून को, जिसे डे जीरो के तौर पर आंका गया है, इस सिस्टम की जलापूर्ति गिरकर 20 फीसदी के निम्नतम स्तर पर आ जाएगी, जब मैक्सिको सिटी के नलों से पानी की आपूर्ति संभव नहीं हो सकेगी। *(साथ में, एमिलियानो रॉड्रिग्ज मेगा व सोमिनी सेनगुप्त)*

©The New York Times 2024

आंकड़े

गेहूं की ज्यादा खरीद

वर्ष 2024-25 में अब तक पिछले साल से ज्यादा 262.48 लाख टन गेहूं खरीदा गया। पिछले वर्ष 262.02 लाख टन गेहूं खरीदा गया था।

राज्य	खरीद
पंजाब	124.26
हरियाणा	71.49
मध्य प्रदेश	47.78
राजस्थान	9.66
उत्तर प्रदेश	9.07

आंकड़े लाख टन में हैं। | स्रोत: FCI

एक बार इंद्र ने गुरु बृहस्पति का अपमान कर दिया, तो उन्होंने स्वर्ग छोड़ दिया। इसके बाद स्वर्ग पर असुरों का राज हो गया और इंद्र को कई कष्ट भुगतने पड़े।

गुरु के अपमान की सजा

अंतर्यात्रा
संकलित

ब्रह्मा के छह मानस पुत्रों में से अंगिरा ऋषि के तीन पुत्र हुए-बृहस्पति, उतथ्य और संवर्त। बृहस्पति देवताओं के गुरु बने। गुरु बृहस्पति देवताओं को सदैव भगवान की भक्ति में लगाए रखते और उनसे विधिवत वैदिक कर्म करवाते।

माना जाता है कि जब-जब देवताओं ने अहंकार में आकर गुरु बृहस्पति की बात पर अमल नहीं किया, तब-तब वे श्रीहीन हो गए। बृहस्पति की नीति सर्वश्रेष्ठ मानी जाती है। देवराज इंद्र ने एक बार अभिमान में गुरुदेव बृहस्पति का अपमान कर दिया। इससे नाराज होकर वह बिना कुछ बोले स्वर्ग छोड़कर दूसरी जगह चले गए।

गुरु के जाते ही स्वर्ग की समस्त आभा चली गई। असुरों का स्वर्ग पर राज हो गया। देवता मारे-मारे फिरने लगे। उन्होंने जैसे-तैसे विश्वरूप को पुरोहित बनाया, लेकिन वह बृहस्पति की भरपाई नहीं कर पाए। क्योंकि उनका मातृकुल असुर था। देवता छिपाकर यज्ञ का अंश असुरों को भी देने लगे।

अंत में इंद्र को ब्रह्महत्या का पाप लगा। इंद्र गुरु बृहस्पति की शरण में पहुंचे और उनसे प्रार्थना की। गुरुदेव ने इंद्र को सभी पापों से मुक्त किया। इसके बाद इंद्र और सभी देवों ने क्षमा-याचना करते हुए गुरु बृहस्पति से फिर से स्वर्ग चलने की प्रार्थना की। गुरुदेव बृहस्पति ने इंद्र को असुरों से स्वर्ग को मुक्त कराने का उपाय बताया, तब कहीं जाकर फिर से स्वर्ग पर देवताओं का राज हुआ।

अमर उजाला

पुराने पन्नों से — 01 अक्तूबर, 1949

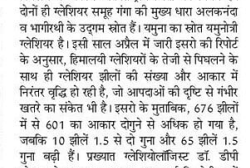

नया विधान लागू होने पर नई सरकार के 10 मंत्री होंगे

नया विधान लागूहोनेपर नयी सरकारके १० मन्त्री होंगे

26 जनवरी को नया विधान लागू होते ही देश में अस्थायी सरकार का गठन होगा, जिसमें केवल 10 मंत्री होंगे। इनमें प्रधानमंत्री सहित विदेश, अर्थ, यातायात, सामाजिक कार्य, खान व बिजली, रक्षा और कानून मंत्री होंगे।

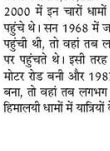

पहाड़ इसके लिए तैयार नहीं

हिमालय पर बढ़ी यात्रियों और वाहनों की अप्रत्याशित भीड़ से ग्लेशियर पिघल रहे हैं। लोगों द्वारा फैलाई गंदगी नदियों में मिल रही है।

जयसिंह रावत | पर्यावरण

उत्तराखंड हिमालय स्थित चारों धामों में यात्रा की शुरुआत में ही श्रद्धालुओं की अप्रत्याशित भीड़ उमड़ रही है। अनुमान लगाया जा रहा है कि इस साल पर्यावरणीय दृष्टि से अति संवेदनशील इन तीर्थों में 70 लाख तक यात्रियों की आमद हो सकती है। दो दशक पहले तक इसकी कल्पना भी नहीं की गई थी।

सरकारी रिकॉर्ड के अनुसार, पिछले साल बदरीनाथ, केदारनाथ, गंगोत्री और यमुनोत्री पहुंचने वाले यात्रियों की संख्या 56,31,224 थी, जबकि राज्य गठन के वर्ष 2000 में इन चारों धामों में कुल 12,92,411 यात्री पहुंचे थे। सन 1968 में जब पहली बार बस बदरीनाथ पहुंची थी, तो वहां तब लगभग 60 हजार यात्री यात्रा पर पहुंचते थे। इसी तरह 1969 में जब गंगोत्री तक मोटर रोड बनी और 1987 में वहां भैरों घाटी का पुल बना, तो वहां तब लगभग 70 हजार यात्री पहुंचते थे। हिमालयी धामों में यात्रियों के साथ ही वाहनों की संख्या

में भी अप्रत्याशित वृद्धि हो रही है। इन धामों तक पिछले वर्ष 5,91,300 वाहन पहुंचे थे।

हिमालय पर यात्रियों के इस महारैली से व्यवसायियों का गदगद होना स्वाभाविक है, क्योंकि यह यात्रा उत्तराखंड की आर्थिकी की रीढ़ होने के साथ ही पड़ोसी राज्यों को भी प्रत्यक्ष या परोक्ष लाभ पहुंचाती है। लेकिन पर्यावरण और आपदा प्रबंधन से जुड़े लोगों को आस्था के अप्रत्याशित ज्वार ने चिंता में डाल दिया है। प्रख्यात पर्यावरणविद पद्मभूषण चंडी प्रसाद भट्ट कहते हैं कि इस संवेदनशील क्षेत्र में कभी लोग लाल कपड़े नहीं पहनते थे और वहां शोर करना भी वर्जित था।

यात्रियों की अत्यधिक भीड़ से यात्रा मार्गों में गंदगी भी खूब हो रही है। इस मार्ग पर जो मलजल शोधन संयंत्र (एसटीपी) लगे हैं, उनकी क्षमता भीड़ के मुकाबले बहुत कम है और गंदगी नदियों में मिल जाती है। पिछले वर्ष बदरीनाथ में लगे संयंत्र का मलजल सीधे अलकनंदा में प्रवाहित होते हुए पूरी दुनिया ने सोशल मीडिया पर देखा। लगभग 1300 किमी लंबे चारधाम यात्रा मार्ग पर स्थित कस्बों की अपनी सीमित ठोस अपशिष्ट (कूड़ा-कचरा) निस्तारण व्यवस्था है। सरकार या नगर निकायों के लिए अचानक इस व्यवस्था का विस्तार आसान नहीं होता। सबसे अधिक चिंता का विषय वाहनों का हिमालय पर चढ़ना है। इस साल 10 दिन की यात्रा में 6.43 लाख यात्री और 60,416 वाहन चारों तीर्थों तक पहुंच चुके थे। नवंबर तक यात्रा चलनी है। इन वाहनों में भी सबसे ज्यादा चिंता पैदा करने वाले डीजल वाहन हैं, जिनसे ज्यादा प्रदूषण होता है। पर्यावरणविदों के लिए एक और चिंता का विषय ब्लैक कार्बन है, जो जलवायु परिवर्तन में योगदान के साथ ही ग्लेशियरों को भी पिघला रहा है। ऑटोमोबाइल द्वारा उत्सर्जित ब्लैक कार्बन बर्फ और बर्फ की सतहों पर जमा हो सकता है। गहरे रंग के कण हल्की सतहों की तुलना में अधिक सूर्य प्रकाश को अवशोषित करते हैं, जिससे बर्फ और बर्फ का ताप बढ़ जाता है और ग्लेशियरों के पिघलने की गति तेज हो जाती है। जंगलों की आग ने पहले ही वातावरण में ब्लैक कार्बन की वृद्धि कर दी है और अब डीजल वाहन इसमें और अधिक वृद्धि करेंगे।

पिछले साल बदरीनाथ तक 2,69,578 वाहन व गंगोत्री तक 96,884 वाहन पहुंचे थे। इस साल 10 दिन में ही बदरीनाथ में 12,263 और गंगोत्री में 10,229 वाहन पहुंच गए। ये दोनों ही धाम गंगोत्री और सतोपंथ ग्लेशियर समूहों के क्षेत्र में हैं, जो कि तेजी से पिघलने के कारण अंतरराष्ट्रीय चिंता का विषय हैं। दोनों ही ग्लेशियर समूह गंगा की मुख्य धारा अलकनंदा व भागीरथी के उद्गम स्रोत हैं। यमुना का स्रोत यमुनोत्री ग्लेशियर है। इसी साल अप्रैल में जारी इसरो की रिपोर्ट के अनुसार, हिमालयी ग्लेशियरों के तेजी से पिघलने के साथ ही ग्लेशियर झीलों की संख्या और आकार में निरंतर वृद्धि हो रही है, जो आपदाओं की दृष्टि से गंभीर खतरे का संकेत भी है। इसरो के मुताबिक, 676 झीलों में से 601 का आकार दोगुने से अधिक हो गया है, जबकि 10 झीलें 1.5 से दो गुना और 65 झीलें 1.5 गुना बढ़ी हैं। प्रख्यात ग्लेशियोलॉजिस्ट डॉ. डीपी डोभाल के अनुसार, लगभग 147 वर्ग किलोमीटर में फैले गंगोत्री ग्लेशियर के पीछे खिसकने की गति 20 से 22 मीटर प्रतिवर्ष है। पिछले एक दशक तक कांवड़िए हरिद्वार से ही गंगा जल भरकर लौट जाते थे, मगर अब वे जल भरने सीधे गोमुख जा रहे हैं। यही नहीं, गंगोत्री और गोमुख के बीच जेनरेटर भी लग गए हैं।

कल्पमेधा

कंप्यूटर कभी भी समितियों का विकल्प नहीं बन सकते। समितियां ही कंप्यूटर खरीदने का प्रस्ताव स्वीकृत करती हैं।

– एडवर्ड शेफर्ड मीडस

मौसम की मार

यह जगजाहिर है कि जलवायु परिवर्तन की वजह से वैश्विक ताप बढ़ रहा है। हर वर्ष तापमान में कुछ और बढ़ोतरी दर्ज होने लगी है। गर्मी का मौसम लंबा होने लगा है। सर्दी में भी गर्मी का असर दिखता है। दुनिया के बहुत सारे इलाके जो पहले बर्फ से ढंके रहते थे, लू के थपेड़े सहने को मजबूर हो चुके हैं। लू की वजह से लोगों की जान भी खतरे में पड़ रही है। इसलिए हर वर्ष जलवायु परिवर्तन के खतरों से निपटने के लिए आयोजित होने वाली बैठक में कार्बन उत्सर्जन में कमी लाने के संकल्प लिए जाते हैं। मगर हकीकत यह है कि इस दिशा में कोई उल्लेखनीय नतीजा दर्ज नहीं हो पा रहा है। चिंता जताई जा रही है कि अगर तापमान में बढ़ोतरी डेढ़ डिग्री सेल्सियस से पार गया, तो दुनिया के सामने विनाश का भयावह मंजर नजर आने लगेगा। मगर इस संकल्प पर दृढ़ता से आगे बढ़ने की अपेक्षित गंभीरता नहीं दिखती। अमीर देश कार्बन उत्सर्जन में कटौती की जिम्मेदारियां गरीब और विकासशील देशों के कंधों पर डाल कर इस समस्या से निजात पाने का सपना देख रहे हैं। छिपी बात नहीं है कि कार्बन उत्सर्जन के लिए सबसे अधिक जिम्मेदार वे देश हैं, जो औद्योगिक उत्पादन अधिक करते हैं, जहां जैव ईंधन का इस्तेमाल ज्यादा होता है। उनसे अपेक्षा की जाती है कि जैव ईंधन के उपयोग में कटौती और ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों पर अपनी निर्भरता बढ़ाएं। मगर ऐसा हो नहीं पा रहा।

इसमें आम नागरिकों का भी योगदान अपेक्षित है। खासकर भारत जैसे विकसित हो रहे देश में, जहां गाड़ियों और औद्योगिक इकाइयों का तेजी से विस्तार हो रहा है। घरों, दफ्तरों, निजी और सार्वजनिक वाहनों या फिर गोदामों आदि को जिस तरह वातानुकूलित बनाने पर जोर दिया जा रहा है, वैसी स्थिति में कार्बन उत्सर्जन में कमी लाना चुनौती बनता गया है। ऊपर से बुनियादी ढांचे के विकास पर अधिक जोर होने की वजह से जंगलों की अंधाधुंध कटाई हो रही है, पृथ्वी की सतह का बड़ा हिस्सा कंक्रीट से ढंकता गया है। ऐसे में कार्बन और गर्मी को अवशोषित करने के नैसर्गिक माध्यम सिकुड़ते गए हैं। लोग वातानुकूलित वातावरण में रहने के अभ्यस्त होते गए हैं, इसलिए तापमान सामान्य से थोड़ा भी बढ़ जाए तो उन्हें सहन नहीं हो पाता। मगर लोग इस समस्या से पार पाने में निजी तौर पर कोई योगदान करते नजर नहीं आते। सलाह दी जाने लगी है कि जीवन-शैली में अगर पारंपरिक तौर-तरीके अपना लिए जाएं, तो वैश्विक ताप बढ़ने से काफी हद तक रोका जा सकता है। सरकारों का जोर चूंकि अर्थव्यवस्था के विकास पर है, इसलिए वे औद्योगिक उत्पाद और बाजार के विस्तार पर अधिक ध्यान केंद्रित करती हैं।

मौसम की मार बढ़ने के पीछे अनेक वजहें हैं। भवन निर्माण से लेकर खानपान के संसाधनों तक में अब पारंपरिक शैली को त्याग दिया गया है। स्थानीय संसाधनों की जगह आयातित वस्तुओं का इस्तेमाल बढ़ रहा है, जिनका मौसम से तालमेल नहीं बढ़ पाता। बिना सोचे-समझे वातानुकूलन और जरूरत के मुकाबले बेलगाम वाहनों और गैस संचालित कार्यों के बढ़ते प्रचलन से गर्मी का प्रकोप और बढ़ रहा है। इससे भवनों के भीतर का वातावरण तो जरूर ठंडा हो जाता है या कुछ सुविधाएं मिल जाती हैं, पर वातानुकूलन संयंत्रों से निकलने वाली गर्मी बाहर के वातावरण का तापमान काफी बढ़ा देती है। जलवायु में उथल-पुथल की जो हालत होती जा रही है, उसमें अब इस बात की जरूरत है कि विकास और पर्यावरण के बीच एक संतुलन कायम किया जाए। अन्यथा सुविधा कब मुसीबत बन जाएगी, कहा नहीं जा सकता।

विस्तारवाद की भूख

चीन को एक ताकतवर देश के तौर पर देखा जाता है, लेकिन आए दिन उसकी जिस तरह की हरकतें सामने आती रहती हैं, उससे यही लगता है कि उसके भीतर विस्तारवाद की एक विचित्र भूख है, जिसकी वजह से वह समय-समय पर अपने आस-पड़ोस के देशों को परेशान करता और धमकाता रहता है। भारत को लेकर उसका रवैया किसी से छिपा नहीं है, जहां अरुणाचल प्रदेश से लेकर भारतीय सीमा क्षेत्र में वह नाहक ही दखलअंदाजी करने की कोशिश करता रहता है। मगर इसके अलावा वह अपने अन्य पड़ोसियों पर भी धौंस जमाता रहता है या फिर उन्हें बिना किसी वजह से उकसाता रहता है। ताजा मामला ताइवान का है, जहां एक बार फिर चीन की सेना ने लगातार दो दिनों तक युद्धाभ्यास किया और एक तरह से ताइवान में घुसपैठ की कोशिश की है। ताइवान के रक्षा मंत्रालय ने शनिवार को कहा कि चीन की नौसेना के सत्ताईस जहाज और बासठ युद्धक विमान ताइवान की सीमा के बिल्कुल करीब आ गए थे। कहने को यह चीन का महज एक युद्धाभ्यास था, मगर ताइवान के चारों तरफ लगातार दो दिनों तक आसमान और समुद्र में इस तरह की आक्रामक और व्यापक स्तर पर की गई सैन्य गतिविधियों के जरिए चीन ने यह संकेत देने की कोशिश की है कि उसकी सेना जहाजों और लड़ाकू विमानों से कैसे ताइवान को घेर सकती है।

यों ताइवान पर दबाव बढ़ाने के लिए चीन की ओर से इस तरह की हरकत कोई पहली बार नहीं है। इससे पहले वह चालीस बार ताइवान में घुसपैठ की कोशिश कर चुका है। इस बार निशाने पर दरअसल ताइवान के नए राष्ट्रपति भी हैं, जिन्हें चीन अलगाववादी विचारधारा का समर्थक मानता है। विचित्र यह है कि ताइवान को चीन अपना अभिन्न इलाका मानता है और इसीलिए उस पर दबदबा कायम रखना चाहता है, जबकि ताइवान और वहां के लोग खुद को संप्रभु राष्ट्र मानते हैं। सवाल है कि चीन के भीतर वह कौन-सी भूख है जो उसको अपने विस्तृत भूभाग पर फैली एक बड़ी आबादी और शासन-क्षेत्र से भी पूरी नहीं हो पा रही है! माना जाता है कि जो वास्तव में शक्तिशाली होता है, उसे उसका प्रदर्शन करके दूसरों को धमकाने या डराने की जरूरत नहीं पड़ती। मगर ऐसा लगता है कि चीन के मामले में यह सच नहीं है।

जलवायु संकट से जूझती महिलाएं

महिला एवं बाल विकास मंत्रालय द्वारा कराए गए अध्ययन के मुताबिक भारत के 70 फीसद जिलों में बाढ़, सूखा और चक्रवात का खतरा बढ़ गया है। 183 जिले चक्रवात और बाढ़ जैसी आपदाओं के प्रति संवेदनशील हैं, वहीं 349 जिले सूखे की मार झेल रहे हैं।

सोनम लववंशी

हाल में महिला एवं बाल विकास मंत्रालय द्वारा कराए गए एक आंतरिक शोध से पता चला है कि बिहार, गुजरात, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, आंध्रप्रदेश, पश्चिम बंगाल और तेलंगाना में महिलाएं और बच्चे विशेष रूप से जलवायु परिवर्तन संबंधी आपदाओं के प्रति संवेदनशील हैं। जलवायु परिवर्तन संबंधी खतरों के संपर्क में आने वाले बच्चों में बौनापन, कम वजन और जल्दी गर्भधारण की संभावना अधिक देखी जा रही है। हमारे देश में महिलाओं और बच्चों पर जलवायु-परिवर्तन के प्रभाव को लेकर बहुत कम शोध हुए हैं, साथ ही नीति निर्माण में अक्सर इनकी अनदेखी की जाती है। महिला एवं बाल विकास मंत्रालय द्वारा कराए गए अध्ययन के मुताबिक भारत के 70 फीसद जिलों में बाढ़, सूखा और चक्रवात का खतरा बढ़ गया है। 183 जिले चक्रवात और बाढ़ जैसी आपदाओं के प्रति संवेदनशील हैं, वहीं 349 जिले सूखे की मार झेल रहे हैं। इन जिलों में महिलाओं और बच्चों में कुपोषण, किशोरावस्था में गर्भ धारण और घरेलू हिंसा संकेतक भी बहुत गंभीर हैं।

देश के करीब 51 फीसद बच्चे गरीबी और जलवायु संकट की दोहरी मार झेलने को मजबूर हैं। आंकड़ों के मुताबिक भारत के करीब 35.2 करोड़ बच्चे वर्ष में एक बार प्राकृतिक आपदा का सामना जरूर करते हैं। ऐसे में हम भले विकसित बनने का दम भर लें, लेकिन कहीं न कहीं यह हकीकत से काफी परे है और वर्तमान के साथ ही भारत का भविष्य भी चिंतित करने वाला है। हम वैश्विक अर्थव्यवस्था में पहले स्थान पर धाक जमाएं या न जमाएं, लेकिन जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए सार्थक कदम की सख्त जरूरत है। मगर हमारे देश में राजनेताओं के लिए पर्यावरण संकट कभी मुद्दा नहीं रहा और शायद यही वजह है कि जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न संकट विकराल हो चला है। जलवायु परिवर्तन के कारण तापमान तेजी से बढ़ रहा है। अब तो हालात इस हद तक बदतर हो चले हैं कि मां की कोख में पल रहा बच्चा तक सुरक्षित नहीं है। आज समूचे विश्व में बढ़ते तापमान के चलते समयपूर्व बच्चों के जन्म का खतरा कई गुना बढ़ गया है। वैज्ञानिकों ने दावा किया है कि तापमान के बढ़ने से न केवल नवजात शिशुओं, बल्कि भ्रूण में पल रहे बच्चे तक के प्राण संकट में हैं।

जलवायु परिवर्तन के कारण हवा की गुणवत्ता खराब हो रही है। बदलता मौसम संक्रामक रोगों के संचरण, पानी की गुणवत्ता और खाद्य सुरक्षा में कमी का कारण बन रहा है। वैसे तो जलवायु परिवर्तन सभी को प्रभावित करता है, लेकिन जैविक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक कारणों से पुरुषों और महिलाओं को अलग-अलग तरीके से प्रभावित करता है। बढ़ते तापमान के कारण गर्भवती स्त्रियों के लिए गंभीर जोखिम का कारण बन रहा है। समय से पहले प्रसव, गर्भ के समय उच्च रक्तचाप और 'प्री-एक्लेमप्सिया' का खतरा काफी बढ़ रहा है। गर्भवती महिलाओं का अधिक गर्मी के संपर्क में आने से गर्भपात और समय पूर्व प्रसव का खतरा कई गुना बढ़ गया है। अमेरिका के नेशनल इंस्टीट्यूट आफ हेल्थ

के एक अध्ययन की मानें, तो गर्भावस्था के पहले सात हफ्तों के दौरान अत्यधिक गर्मी के संपर्क में आने वाली महिलाओं में जल्दी प्रसव होने की संभावना ग्यारह फीसद तक बढ़ जाती है।

जलवायु परिवर्तन के चलते बीमारियों का प्रसार बढ़ता है, जो मानव स्वास्थ्य के लिए संकट पैदा करता है। भारत में गरीब समुदाय की महिलाएं स्वास्थ्य से जुड़े जोखिमों के प्रति ज्यादा संवेदनशील होती हैं।

> **जलवायु परिवर्तन के चलते बीमारियों का प्रसार बढ़ता है, जो मानव स्वास्थ्य के लिए संकट पैदा करता है। भारत में गरीब समुदाय की महिलाएं स्वास्थ्य से जुड़े जोखिमों के प्रति ज्यादा संवेदनशील होती हैं। इसकी सबसे बड़ी वजह है कि वे ऐसे वातावरण में रहने को मजबूर हैं, जो स्वास्थ्य और साफ-सफाई की दृष्टि से काफी प्रदूषित है। साथ ही, ऐसी महिलाओं को पर्याप्त स्वास्थ्य सेवाएं भी मयस्सर नहीं हो पाती हैं। अगर महिलाओं का स्वास्थ्य खराब है, तो दिक्कत होना स्वाभाविक है, लेकिन अगर परिवार का कोई अन्य सदस्य भी बीमार हो जाए तो इससे घर की महिलाओं की दिनचर्या सबसे ज्यादा प्रभावित होती है।**

इसकी सबसे बड़ी वजह है कि वे ऐसे वातावरण में रहने को मजबूर हैं, जो स्वास्थ्य और साफ-सफाई की दृष्टि से काफी प्रदूषित है। साथ ही, ऐसी महिलाओं को पर्याप्त स्वास्थ्य सेवाएं भी मयस्सर नहीं हो पाती हैं। बढ़ती बीमारियां महिलाओं के जीवन पर सीधे असर डालती हैं। अगर उनका स्वास्थ्य खराब है, तो दिक्कत होना स्वाभाविक है, लेकिन अगर परिवार का कोई अन्य सदस्य भी बीमार हो जाए तो इससे घर की महिलाओं की दिनचर्या सबसे ज्यादा प्रभावित होती है। इस तरह महिलाएं बीमारी के चक्र में फंसी रहती हैं।

भारत में 1901 से 2018 के बीच औसत तापमान में 0.7 डिग्री की बढ़ोतरी दर्ज की गई। इससे देश भर में लू के दिन तेजी से बढ़ गए। इसे 'साइलेंट किलर' का नाम दिया गया है। आज भी हमारे देश की करीब 67 फीसद आबादी ऐसे इलाकों में रहती है, जहां वायु गुणवत्ता राष्ट्रीय मानक 40 माइक्रोग्राम प्रति घनमीटर से ज्यादा है। इसके चलते भारतीयों की औसत आयु 5.3 वर्ष तक कम हो रही है। इसका सबसे ज्यादा असर महिलाओं के स्वास्थ्य पर पड़ रहा है, क्योंकि महिलाएं घर के अंदर भी सुरक्षित नहीं हैं। घर की रसोई से निकलने वाला धुआं भी महिलाओं के स्वास्थ्य को प्रभावित कर रहा है। आंकड़ों के अनुसार उत्तर प्रदेश के उत्तरी मैदानी इलाकों में बौनापन बढ़ रहा है, जबकि उत्तरी महाराष्ट्र और दक्षिण मध्यप्रदेश कम वजन वाले बच्चों के लिए चिह्नित किए गए हैं। जलवायु परिवर्तन के प्रभाव के चलते बच्चों में बौनापन होने की संभावना छह फीसद अधिक है, वजन कम होने की संभावना 24 फीसद अधिक है। न्यूनतम आहार विविधता में 35 फीसद कमी का अनुभव होता है, और अगर वे पांच वर्ष से कम उम्र के हैं और सूखे के संपर्क में हैं, तो मृत्यु की संभावना 12 फीसद बढ़ जाती है।

इस अध्ययन में सूखे, बाढ़ और चक्रवात वाले क्षेत्रों में महिलाओं और युवा लड़कियों पर प्रभाव के संदर्भ में प्रमुख जगहों की पहचान की गई है। उत्तरी बिहार और उत्तर प्रदेश के कुछ हिस्से, दक्षिण पश्चिम बंगाल, आंध्र प्रदेश और तेलंगाना के कुछ हिस्से, पूर्वी महाराष्ट्र, उत्तरी मध्यप्रदेश और दक्षिणी उत्तर प्रदेश के कुछ हिस्से ज्यादा प्रभावित हैं। ऐसे क्षेत्रों में सूखे की स्थितियों के चलते कम वजन वाली महिलाओं में 35 फीसद, बाल विवाह में 37 फीसद, किशोर गर्भावस्था 17 फीसद और घरेलू हिंसा की संभावना 50 फीसद तक बढ़ जाती है।

जलवायु परिवर्तन के चलते देशभर में भीषण गर्मी और लू ने विकराल रूप ले लिया है। भारत में लू चलने का एक मूल कारण ग्लोबल वार्मिंग है। जीवाश्म ईंधन जलाने, वनों की कटाई और औद्योगिक गतिविधियों के कारण पृथ्वी के औसत तापमान में दीर्घकालिक वृद्धि हो रही है। अभी बीते दिनों उत्तराखंड के जंगलों की आग सबने देखी। भीषण गर्मी के प्रकोप के चलते दुनिया भर में हर वर्ष करीब 1.53 लाख लोग मौत के आगोश में समा जाते हैं। आश्चर्य की बात है कि 20 फीसद मौतें अकेले भारत में होती हैं, जो सबसे ज्यादा है। गर्मी के बढ़ते प्रकोप के कारण मौतों को जायज ठहराना सही नहीं है। सरकार को प्रत्येक राज्य और शहर में लू के प्रभावों से निपटने के लिए कार्ययोजना बनानी होगी, ताकि ऐसी असामयिक मौत को टाला जा सके। जलवायु परिवर्तन के प्रभावों से महिलाओं और बच्चों को बचाने के लिए एक दीर्घकालिक नीति की आवश्यकता है।

वक्त का बहाना

रितुप्रिया शर्मा

आज जिंदगी की व्यस्तता कुछ इस तरह की होती गई है कि लगातार हम उस वक्त की तलाश में घूम रहे हैं, जो हमें थोड़ी फुर्सत दे। फुर्सत उन लम्हों को जीने की, जो हमारे अपने हैं, लेकिन इन लम्हों के लिए हमारे पास वक्त ही नहीं बचा है। आज हर आदमी यही कहता फिर रहा है कि सब है, पर वक्त नहीं है। वक्त कहां से लाऊं? एक दिन के पूरे चौबीस घंटे भी कम पड़ रहे हैं। समूचा वर्ष कैसे निकल गया, पता नहीं चला! अक्सर लोग कहते हैं कि नौकरी के दिन के तौर पर सोमवार की शुरुआत हुई नहीं कि कब रविवार आ गया और उस दिन भी राहत के पल की खोज होने लगी, यह पता नहीं चला। ये कुछ ऐसे हालात हैं, जो हम रोजमर्रा की जिंदगी में लगातार बोल रहे हैं या किसी को बोलते हुए सुन रहे हैं।

हम सभी ने हमारी फुर्सत को अपने घर से या अपने दायरे से रुखसत कर दिया है। फुर्सत के लिए कोई शायद कोई कोशिश भी नहीं है। सुबह काम पर जाने की जल्दी, शाम को घर आने की जल्दी, फिर घंटों टीवी या मोबाइल से बात करने की जल्दी। जैसे इन संसाधनों में ही हमारी आत्मा बसती हो। और इस पर भी शिकायत कि वक्त नहीं मिलता। सवाल है कि हम अपनी नौकरी या रोजगार से बचे तमाम वक्त को तकनीकी संसाधनों में झोंकने के बाद यह कैसे कह पाते हैं कि वक्त की कमी है!

पहले का दौर, जिसमें लोग चौपालों, चबूतरों, मैदान में आराम से बैठ कर बातें करते दिख जाते थे या फिर खुली सड़क पर घूमते दिखते थे, अब वह कहीं नहीं है। अब एक बंद और दौड़ती हुई दुनिया हमें नजर आती है। बंद ऐसे कि घर आने के बाद बाहर किसी से नहीं मिलना-जुलना और दौड़ती हुई ऐसे कि सब कुछ पाने की बदहवास चाहत। सब कुछ पाकर भी ऐसा खालीपन, जिसे हम सभी कभी न भर पाए।

क्या हो गया है हमें? हम अपने साथ ये क्या करना चाहते हैं? आस-पड़ोस की तो दूर, हमारे पास अपने भी छोटे और मासूम बच्चों के लिए वक्त ही नहीं है। ज्यादा रोते देख कर उन्हें भी हम मोबाइल, टीवी आदि के साथ लगा देते हैं। हमारी वृद्ध मां की आंखें कभी घर पर तो कभी गांव में अकेले रहते हुए हमारा इंतजार करती हैं, लेकिन हम उन्हें अपने आने की रोशनी कभी नहीं दे पाते। कारण के तौर पर उसी बात का रोना है कि हमारे पास समय नहीं है। जिस पिता ने पूरी जिंदगी अपनी एक-एक चाहत दबाकर निकाल दी, हर रोज हमारे पालन-पोषण से लेकर भविष्य तक के लिए सोचा, अपने दोस्तों, परिचितों से बात की, सही जगह पहुंचाने के लिए हर संभव उपाय किए, उससे दुम दबाकर निकलने में हम अपनी भलाई समझने लगे हैं, क्योंकि हमारे मुताबिक हमारे पास इतनी फुर्सत नहीं है कि हम उनके दर्द को समझ सकें। अपने फायदे के लिए भले ही हमें हजारों किलोमीटर दूर विदेश जाना पड़ जाए, हम जाते हैं, फुर्सत भी निकाल लेते हैं, मगर मां-पिता के पास कुछ पल गुजारने के लिए वक्त नहीं है। जिस काम के लिए हमें पैसा और शोहरत मिलती है, वहां के लिए हमारे पास खूब वक्त है, मगर जिन चीजों में हमें ये दोनों ही चीजें नहीं मिलती, वहां के लिए हमें फुर्सत नहीं है।

ये बात बिल्कुल ठीक है कि इस प्रतियोगी युग में आगे बढ़ते रहने के लिए हमें अपने आप को भी बुलाना पड़ता है, मगर क्या हम यह सही कर रहे हैं? हमने अपने सारे रिश्तों को तिलांजलि देकर क्या कुछ हासिल किया है? ये कुछ हासिल करने की दौड़ ही हमें सब कुछ खो देने को मजबूर कर देती है। पहला सवाल यह है कि क्या हासिल किया, दूसरा अपनी पसंद का अगर कुछ हासिल कर भी लिया तो उसे हासिल करना ही काफी नहीं होता। उसको बरकरार रखने के लिए भी हमें अपना दम-खम लगाना पड़ता है। अब उसे बनाए रखने के लिए जो जोर लगाना पड़ता है, वह हमें अंधी दौड़ की ओर ले जाता है। कोशिश करें, लाभ उठाएं, जीवन के हर क्षेत्र में आगे भी जाएं, पर अपने आप को, परिवार को और समाज को न भुला दें। इसका कारण है कि यही नींव का वह पत्थर है, जिस पर हम टिके हैं। नींव हिली तो हम भी कहीं के नहीं रहेंगे।

यह हमारा भुलावा है कि हम समय नहीं होने की दुहाई लगाते रहेंगे और हमारे लिए दूसरे लोग हर बार हर जगह मौजूद ही रहेंगे। किसी न किसी दिन उनका धैर्य भी टूटेगा और वे अपने-आप को हमसे अलग-थलग कर लेंगे। दिन के चौबीस घंटे कोई मामूली अवधि नहीं होती। उसका सदुपयोग कैसे करना है, अपने आपको, परिवार को और समाज को वक्त कैसे देना है, इसका एक प्रारूप अपने दिमाग में बना कर रखा जा सकता है। अपने आप को भी उपेक्षित नहीं करना चाहिए, क्योंकि यह हमारी मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है।

पैसा, सत्ता, प्रलोभन, बड़ा आदमी बनना, सब धरे के धरे रह जाते हैं। जब हम किसी मुसीबत में होते हैं, तब हमारे अपने ही हमें रोशनी में लाते हैं। हम प्रेम का पाठ हमारी मां के गर्भ से ही सीखकर आते हैं तो इंसान होने के नाते क्यों न हम अपनी प्राथमिकताओं को बदलें। फिर से वही फुर्सत का दौर लेकर आए, मां का आंचल, पिता का साया, बच्चों का मन- सब कुछ जीत लें। अगर यह जीत लिया तो समझिए कि पूरी दुनिया जीत ली। उनकी प्रार्थनाओं और शुभकामनाओं में इतनी शक्ति होती है कि हमारे भविष्य की राह आसान हो जाएगी और हमें यह नहीं कहना पड़ेगा की फुर्सत नहीं है।

दुनिया मेरे आगे

> **आस-पड़ोस की तो दूर, हमारे पास अपने भी छोटे और मासूम बच्चों के लिए वक्त ही नहीं है। उन्हें भी हम मोबाइल, टीवी आदि के साथ लगा देते हैं। हमारी वृद्ध मां की आंखें कभी घर पर तो कभी गांव में अकेले रहते हुए हमारा इंतजार करती हैं, लेकिन हम उन्हें अपने आने की रोशनी कभी नहीं दे पाते।**

सेहत की फसल

विश्व स्तर पर भारत मोटे अनाज का सर्वाधिक पैदावार वाला देश है, जहां रागी, बाजरा, कोदो, सांवा से लेकर चना तक बारह से अधिक प्रकार का मोटा अनाज उपलब्ध है। इसकी मांग विश्व भर में उच्च पोषक गुणों तथा अनेक स्वास्थ्य लाभों के कारण निरंतर बढ़ रही है। यह 'श्रीअन्न' के नाम से भी लोकप्रिय है तथा आज देश में इससे बने अनेक रुचिकर खाद्य पदार्थ जैसे- पारंपरिक भारतीय भोजन डोसा, इडली, पोहा और डबल रोटी जैसे आधुनिक खाद्य आदि के साथ- साथ दूध जैसे पेय पदार्थों के लिए उपयुक्त ऐसे पात्र भी उपलब्ध हैं। विडंबना यह है कि मोटे अनाज के उत्कृष्ट उत्पादक राज्यों से समृद्ध देश में ही इसके विषय में जागरूकता का भारी अभाव है। इसे अक्सर पारंपरिक, पुराना और आधुनिकता रहित मान लिया जाता है। शहरीकरण में बाजारों में बढ़ रहे अत्यधिक संरचित एवं मिलावटी भोजन के पोषण रहित और हानिकारक होने की चर्चा अवश्य होती है, लेकिन इसका एक सरल विकल्प मोटा अनाज है, जिसके प्रति समय-साध्य और असुविधाजनक होने की अनेक गलत धारणाएं और पूर्वाग्रह हैं जो लोगों को भ्रमित करते रहते हैं।

– खुशी श्रीवास्तव, शाहदरा, दिल्ली

पहाड़ की सुरक्षा

हिमाचल प्रदेश के सुप्रसिद्ध पर्यटन स्थल कुल्लू-मनाली के साथ साथ पर्यटक अटल सुरंग का भी नजारा ले रहे हैं। लाखों पर्यटकों का पहुंचना कारोबार के लिए तो अच्छा है, लेकिन पर्यावरण के लिए यह शुभ संकेत नहीं है। इसी तरह उत्तराखंड में चार धाम यात्रा के शुरू होते ही केदारनाथ में श्रद्धालुओं की बहुत ज्यादा भीड़ देखने को मिली, लाखों श्रद्धालु पहुंचे। यह भी अनुमान लगाया जा रहा है कि आने वाले दिनों में और भी बहुत से श्रद्धालु वहां पहुंच सकते हैं। हिमनद वैज्ञानिकों ने इस पर चिंता जाहिर करते हुए कहा है कि इसके लिए कुछ उपाय किए जाने चाहिए। सरकारों और प्रशासन को इसके लिए प्राथमिक तौर पर गंभीर होना चाहिए और तीर्थ यात्रा के लिए ऐसी व्यवस्था बनानी चाहिए कि जिससे ज्यादा भीड़ जमा न हो। वहां 16 जून, 2013 को केदारनाथ में हुए प्राकृतिक आपदा ने हजारों श्रद्धालुओं को अपनी चपेट में ले लिया था। इस हादसे बारे सोच कर आज भी रोंगटे खड़े हो जाते हैं।

– राजेश कुमार चौहान, जलंधर

जीवन अनमोल है

युवाओं में बढ़ती आत्मघाती प्रवृत्ति बदलती और बिगड़ती जीवनशैली का परिणाम है। आज यह एक कड़वी सच्चाई है और इसके लिए अभिभावक और संरक्षक के तौर पर हम सामूहिक रूप से जिम्मेदार हैं। हमने एक ऐसी आभासी दुनिया का निर्माण किया हुआ है जो युवाओं के समांतर चल रही है। यह मूलतः अतीत के निष्कर्षों एवं भविष्य के बेहतरी की कल्पना पर आधारित है, जिसकी कीमत निर्दोष युवाओं को असहनीय मानसिक पीड़ा, तनाव और संबंधों में असहजता के रूप में चुकानी पड़ती है। कारण स्पष्ट है अभिभावकों की महत्त्वाकांक्षा, युवाओं की आकांक्षाओं पर हावी है। आत्मघात जैसे कृत्यों में बढ़ोतरी व्यवस्था पर बहुत से सवाल खड़े करता है। सामाजिक मानकों पर खरा उतरने का नैतिक दबाव कहां तक उचित ठहरता है, इसकी समीक्षा की जानी चाहिए। समय के साथ मजबूत होने वाली मानसिक चेतना आज इतनी लाचार कैसे है? जीवन अनमोल है इसे सहज ही होना चाहिए।

– जोगिंद्र भारद्वाज, नरेला, दिल्ली

द्वंद्व के मोर्चे

यूक्रेन में युद्धरत रूस के राष्ट्रपति पुतिन एक बार फिर चीन के दौरे पर हैं, जिससे दुनिया के माथे पर बल पड़ गए हैं, क्योंकि दुनिया में चीन ही एकमात्र ऐसा देश है जिसने यूक्रेन युद्ध के लिए रूस को अपना समर्थन बिना शर्त दे रखा है। पश्चिमी देशों की आशंका है रूस चीन के समर्थन के बिना इतना लंबा युद्ध नहीं लड़ सकता। चीन के राष्ट्रपति शी जिनपिंग की इस दोस्ती से पुतिन इतने गदगद हैं कि उन्होंने भारत जैसे देश के दौरे को टालकर चीन जाकर रक्षा सहयोग जैसे व्यापार में अपनी रुचि दिखाई, क्योंकि रक्षा सहयोग की आड़ में रूस के रक्षा उद्योग को चीन द्वारा लाभान्वित किया जा रहा है। भारत ने बुद्ध के संदेश को अपनाते हुए युद्ध का हमेशा विरोध किया, वह भी बिना किसी गुट में शामिल हुए और पूरी दुनिया में इसकी सराहना भी हुई। बावजूद इसके भारत ने रूस की पुरानी दोस्ती भी बरकरार रखी।

– मामचंद सागर, रजोकरी

www.readwhere.com

बाजार में उछाल

सकारात्मक संकेत

बाजार में उछाल तथा आर्थिक क्षेत्रों में उत्साह से वर्तमान सरकार के प्रति निवेशकों का विश्वास प्रकट हुआ है। आमतौर से लोकसभा चुनाव परिणाम आने से पहले बाजार नए रिकार्ड नहीं बनाता है। लेकिन खासकर भारतीय रिजर्व बैंक-आरबीआई द्वारा सरकार को भारी डिविडेंट देने की घोषणा के बाद सेंसेक्स और निफ्टी में लगातार उछाल आ रहा है। शेयर बाजार में ऐतिहासिक उछाल आया है जिससे लगातार दो दिन सेंसेक्स और निफ्टी ने नई ऊंचाइयां छुई हैं। आरबीआई ने हाल ही में सरकार को रिकार्ड डिविडेंट देने की घोषणा की जिसका निवेशकों की भावनाओं पर बहुत सकारात्मक प्रभाव पड़ा। मुख्यत: इसका कारण चुनाव परिणामों से आशानुकूल उम्मीद है। आरबीआई ने सरकार को रिकार्ड 2.1 लाख करोड़ रुपये डिविडेंट हस्तांतरित करने का फैसला किया जो वित्तीय बाजार में उछाल का प्रमुख कारण है। इससे न केवल सरकार की राजकोषीय स्थिति मजबूत होगी, बल्कि इससे केन्द्रीय बैंक प्रबंधन द्वारा व्यावहारिक प्रबंधन तथा जीवन्त आर्थिक स्वास्थ्य के भी संकेत मिलते हैं। यह डिविडेंट बजट में अनुमानित धनराशि से लगभग दूना है। इतने भारी डिविडेंट से सरकार को अतिरिक्त राजकोषीय 'स्पेस' मिलता है। इससे ढांचागत परियोजनाओं में निवेश तथा समाज कल्याण कार्यक्रमों की सहायता में सरकार को ज्यादा सार्वजनिक खर्च का अवसर मिलता है। भारी आरबीआई डिविडेंट को आर्थिक स्थायित्व तथा मजबूत आधार का संकेत मिलता है। इससे बाजार में घरेलू और विदेशी पूंजी आने को प्रोत्साहन मिलता है। डिविडेंट की घोषणा के बाद सेंसेक्स और निफ्टी में असाधारण उछाल आया है। इससे सेंसेक्स ने 75,000 तथा निफ्टी ने 20,000 का स्तर पार किया।

इस उछाल से भारतीय अर्थव्यवस्था की मजबूती तथा उसकी वृद्धि की संभावनाओं में निवेशकों का विश्वास प्रकट होता है। आरबीआई द्वारा डिविडेंट की घोषणा तथा उछाल मार रहे शेयर बाजार के बीच एक सकारात्मक संबंध है। बाजार में उछाल का एक और कारण सकारात्मक चुनाव परिणामों का अनुमान है। निवेशक अक्सर राजनीतिक स्थायित्व को आर्थिक नीतियों तथा विकास दिशा का प्रमुख निर्धारक मानते हैं। विकास की यह संभावना ज्यादा निवेश आकर्षित करती है, शेयर बाजारों को और ऊंचाई पर ले जाती है तथा आशावाद और वित्तीय समृद्धि का चक्र तैयार करती है। वर्तमान भावनाओं से संकेत मिलता है कि चुनाव परिणाम एक बिजनेस-हितैषी तथा बाजार-हितैषी नीतियां बनाए रखेंगे। ऐतिहासिक प्रवृत्तियों से संकेत मिलते हैं कि बाजार स्पष्ट व स्थिर चुनाव परिणामों के प्रति सकारात्मक प्रतिक्रिया देते हैं जिसे आर्थिक प्रशासन में निरंतरता तथा पूर्वानुमान आधारित माना जाता है। आरबीआई डिविडेंट की घोषणा तथा शेयर बाजार में उछाल एक सकारात्मक चक्र है। यह सरकार को अतिरिक्त राजकोषीय संसाधन देता है जो सरकार को ज्यादा महत्वपूर्ण विकास पहलों का अवसर देते हैं। इससे आर्थिक वृद्धि तेज होती है। राजकोषीय व्यावहारिकता, आर्थिक रणनीति तथा राजनीतिक उम्मीदों के बीच इस ध्रुवीकरण से राष्ट्र के भविष्य के प्रति अच्छी उम्मीदें सामने आती हैं। चुनाव जल्द ही समाप्त होकर नई सरकार बनेगी। ऐसे में निवेशकों में सकारात्मक भावनायें बाजार के स्थायित्व व विकास का संकेत देती हैं। लेकिन केवल शेयर बाजार ही किसी देश की अर्थव्यवस्था की संपूर्ण तस्वीर नहीं पेश करता है। शेयर बाजार में उतार-चढ़ाव अनुमानों पर आधारित होता है और इसका कारण जमीनी यथार्थ के बजाय सकारात्मक भावनायें अधिक होती हैं।

भारतीय चुनावों में राजनीतिक संदेश

वर्तमान चुनाव में डिजिटल दुष्प्रचार अभियानों ने घुसपैठ कर ली है। इससे अधिकारियों तथा नागरिकों के समक्ष समान रूप से चुनौतियां पैदा हुई हैं। भारतीय निर्वाचन आयोग ने सभी राजनीतिक दलों को इस संबंध में चेतावनी दी है।

साईदीप कार
(लेखिका, विश्वविद्यालय में शिक्षक हैं)

एक प्रमुख फिल्म प्रोग्रामर तथा लेखक डेविड श्वार्टज़ ने ठीक ही कहा है, 'राजनीतिक कामर्शियल डाक्यूमेंट्री की तरह दिखना चाहते हैं, पर वे फिक्शन फिल्म निर्माण की सभी तकनीकों का प्रयोग करते हैं जिनमें स्क्रिप्ट, पर्फामेंस व संगीत शामिल हैं।' यह भारत में वर्तमान आम चुनाव तथा राजनीतिक संप्रेषण के बारे में लगभग सही है। 'डीप फेक' समेत तकनीकों के प्रयोग से इस चुनाव को 2019 के आम चुनाव से एकदम अलग बनाने के प्रयास किए जा रहे हैं। राजनीतिक संप्रेषण राजनीतिक संदेश, अभियान और विज्ञापन तैयार करने तथा उनको प्रभावित करने से संबंधित है जिसमें अक्सर मॉस मीडिया का प्रयोग होता है। यह अंतर-विषयी क्षेत्र है जिसमें संचार, पत्रकारिता और राजनीति विज्ञान शामिल हैं। राजनीतिक संप्रेषण का संबंध सूचना के प्रवाह, राजनीतिक प्रभाव, निर्णय लेने, खबरों तथा उनके नागरिकों पर प्रभाव से है।

वर्डवाइड वेब या इंटरनेट के आविष्कार के बाद विश्लेषण करने वाले डेटा की मात्रा बहुत बढ़ गई है और शोधकर्ता राजनीतिक संप्रेषण की गतिशीलता समझने के लिए कंप्यूटेशनल विधियां प्रयोग कर रहे हैं। यह बात भारत में 2024 के वर्तमान संसदीय चुनाव के संबंध में भी पूर्णत: प्रासांगिक है। भारत में लोकसभा के 543 सदस्यों का चुनाव करने के लिए संसदीय चुनाव 19 अप्रैल को शुरू हुए और 1 जून तक सात चरणों में जारी रहेंगे। यह इतिहास का सबसे लंबा चुनाव है। इसने पहले हुए 44 दिन चुनाव का रिकार्ड तोड़ दिया है और 1951-52 में हुए पहले भारतीय संसदीय चुनाव के बाद इसका दूसरा स्थान है। इस चुनाव में 1.4 बिलियन लोगों में से लगभग 970 मिलियन, यानी कुल जनसंख्या के लगभग 70 प्रतिशत लोग भाग लेंगे। आम चुनाव के साथ ही आंध्र प्रदेश, अरुणांचल प्रदेश, ओडिशा और सिक्किम राज्यों में भी चुनाव होंगे। इसके साथ ही 12 विधानसभाओं के 25 निर्वाचन क्षेत्रों में उपचुनाव भी होंगे। वोटों की गिनती 4 जून को होगी और उसी दिन परिणामों की घोषणा हो जाएगी। अपने दो कार्यकाल पूरे कर चुके वर्तमान प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी लगातार तीसरे कार्यकाल के लिए चुनाव लड़ रहे हैं।

सोशल मीडिया राजनीतिक संप्रेषण में लगातार महत्वपूर्ण उपकरण बनता जा रहा है। जनसंख्या के एक हिस्से के लिए यह एक मुख्य मंच है जहां लोग खबरें प्राप्त करते हैं तथा उन पर टिप्पणी कर व उनको साझा कर लोगों से संवाद करते हैं। सोशल मीडिया ने नाटकीय रूप से आधुनिक राजनीतिक अभियानों को नया रूप दिया है। डिजिटल रूप से शिक्षित ज्यादा से ज्यादा लोगों के मतदान प्रक्रिया में आने के बाद सोशल मीडिया राजनेताओं के लिए महत्वपूर्ण उपकरण बन गया है जिसके माध्यम से वे स्वयं को स्थापित कर मतदाताओं से संपर्क करते हैं। सोशल मीडिया प्रयोग करने का अनुभव मुख्यत: प्रयोगकर्ता पर निर्भर करता है जिसमें प्लेटफार्म के एल्गोरिद्म प्रत्येक प्रयोगकर्ता की पसंद के अनुभव के अनुसार बनाए जाते हैं। इसके कारण डिजिटल सोशल व्यवहार बढ़ने पर प्रत्येक व्यक्ति अपने जैसी सोच वाले ज्यादा से ज्यादा लोगों के संपर्क में आता है। सके साथ ही, सोशल मीडिया ने राजनीति को बदला है क्योंकि यह लोगों को अपने निर्वाचकों को सीधे संप्रेषित करने का मौका देता है तथा लोग सीधे राजनेताओं से बात कर सकते हैं। हालांकि, यह अनाधिकारिक प्रकृति दुष्प्रचार का काम भी कर सकती है क्योंकि 'संस्थागत पत्रकारिता में तथ्यों की जांच प्रक्रिया' जैसी इसमें कोई चीज नहीं होती है। हालांकि, सोशल मीडिया प्लेटफार्म एक लोकतांत्रिक एजेंट का काम करते हैं जो लोगों को राजनीतिक संवाद में सक्षम बनाते हैं, भले ही वे चाहे जिस भौगोलिक या सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि से हों। नागरिक अपने दृष्टिकोण सामने रख सकते हैं, हाशियाकृत विमर्शों को विस्तार दे सकते हैं तथा सामूहिक कार्रवाई को लामबंद कर सकते हैं। इस प्रकार वे समाज का लोकतांत्रिक ढांचा मजबूत करते हैं। इसके साथ ही सोशल मीडिया का हस्तक्षेप सक्रिय रूप से राजनीतिक संस्थानों में पारदर्शिता और जवाबदेही को बढ़ावा देता है क्योंकि इससे जनता की जांच गहन हो जाती है तथा फीडबैक व्यवस्था का विस्तार होता है।

इसके साथ ही भारत के वर्तमान चुनाव में तकनीकी हस्तक्षेप लगातार राजनीतिक संप्रेषण में हस्तक्षेप कर रहा है। इस चुनाव में दुष्प्रचार का नया चेहरा सामने आया है। इस बार भारत मतदाताओं के समक्ष मुस्कराता है, उनसे बात करता है तथा उनको ऐसे विवेक के साथ अपने पक्ष में लाता है जिसे शुरू करना कठिन है और उस पर नियंत्रण करना और भी कठिन है। 2019 के चुनाव में भी घृणा और दुष्प्रचार अभियान शामिल थे, पर तकनीक के प्रयोग से पूरी परिस्थितिकी बदल गई है जो दुष्प्रचार की दर बहुत बढ़ा देती है। पिछले पांच वर्षों में धोखाधड़ी को नए रास्ते मिल गए हैं। कानून लागू करने वाली एजेंसियां लगातार चेतावनी दे रही हैं कि भारतीय मतदाताओं को 2024 में चुनाव दुष्प्रचार का खतरा बहुत बढ़ गया है।

लोग असली तथा 'कृत्रिम बुद्धि'-एआई के बारे में अंतर करने में ठीक से सक्षम नहीं हैं जिससे वे धोखाधड़ी तथा अनाधिकारिक पहुंच के शिकार हो सकते हैं। सोशल मीडिया अभियान फर्जी खबरों और दुष्प्रचार पर लगाम लगाने के प्रयास कर रहे हैं। भारत सरकार आनलाइन फर्जी खबरों के प्रसार को बेहतर ढंग से संबोधित करने के लिए वर्तमान विधायनों का उच्चीकरण कर रही है।

2019 का चुनाव सोशल मीडिया पर हुआ था। शोधकर्ताओं ने संवेदनशील अभियानों की पहचान की थी जिन्होंने वाटसएप संदेशों और आईटी बोट का व्यापक प्रयोग कर फोटो में परिवर्तन किए थे, विषयवस्तु में बदलाव किए थे। 2024 के आम चुनाव में फेसबुक पर फर्जी वीडियो चलाए जा रहे हैं। ऐसे में सवाल है कि डिजिटल प्लेटफार्म ऐसे मीडिया की पहचान कैसे कर उनको सही संदर्भ में सामने रख सकते हैं। एआई के युग में भी ऐसे उपाय अभी सुनियोजित नहीं हैं। अब सस्ते या मुफ्त टूल आम लोगों को भी डीप फेक तैयार करने में सक्षम बना रहे हैं। इससे फर्जी या अवैध विषयवस्तु का प्रसार रोकना और कठिन हो गया है। इसका अर्थ है कि तकनीकी प्लेटफार्मों को अपराधियों के खिलाफ कठोर कार्रवाई करनी होगी तथा दुष्प्रचार की श्रृंखला तोड़ने के लिए वर्तमान समय की तुलना में बहुत तेज कदम उठाने होंगे। भारत में 2019 चुनावों के बाद सोशल मीडिया में आया एक सबसे बड़ा परिवर्तन ट्विटर या एक्स की अनुपस्थिति है। इस प्लेटफार्म का प्रयोग भारत के कुछ नियंत्रित राजनेता तथा सरकारी एजेंसियां करती थीं। इसके माध्यम से वे आधिकारिक सूचनाओं को देश के मीडिया तक पहुंचाते थे।

आजकल की दुनिया में राजनीति समझने का अर्थ यह समझना है कि राजनेता विभिन्न मीडिया चैनलों का संप्रेषण के लिए किस तरह प्रयोग करते हैं। ये चैनल न केवल राजनीतिक छवियों और संदेशों का प्रसारण करते हैं, बल्कि उनको स्वरूप भी प्रदान करते हैं। जिस प्रकार राजनीतिक व्यवस्थायें नीतियों व निर्णयों के माध्यम से प्रभावित करती हैं, उसी प्रकार मीडिया के ढांचे राजनीतिक संप्रेषण प्रक्रियाओं पर गंभीर प्रभाव डालते हैं। वर्तमान समय में आसानी से बनाए जा सकने वाले 'एआई वीडियो' अपनी लगभग सटीक छायाओं तथा हाथों के संचालन से कभी-कभी डिजिटल रूप से साक्षर लोगों को भी भ्रमित कर देते हैं। लेकिन 1.4 बिलियन लोगों के देश में यह खतरा बहुत अधिक है क्योंकि बहुत से लोग तकनीकी रूप से सक्षम नहीं हैं और जहां विषयवस्तु से छेड़छाड़ कर खासकर चुनाव के मौसम में आसानी से नस्ली तनाव पैदा किया जा सकता है। भारतीय निर्वाचन आयोग ने हाल ही में राजनीतिक पार्टियों को चेतावनी दी है कि वे कृत्रिम बुद्धि-एआई का प्रयोग दुष्प्रचार फैलाने के लिए न करें। उसने आईटी व अन्य कानूनों के सात प्राविधान जारी किए हैं जिसमें धोखाधड़ी करने, अफवाहें फैलाने तथा समाज के विभिन्न तबकों में दुश्मनी पैदा करने के अपराधों में तीन साल तक कैद की सजा हो सकती है। हालांकि, शुरुआत में फर्जी वीडियो के कुछ मामले सामने आए थे, पर बाद में ऐसे प्रकरणों पर लगाम लगी है। उम्मीद है कि भारत में लोकसभा चुनाव स्वच्छ एवं निष्पक्ष होंगे तथा एआई का प्रयोग कर धोखाधड़ी करने का मौका लोगों को नहीं मिलेगा।

बुनियादी सुविधाओं से निराश गुरुग्राम वासी

उच्च करों के बावजूद खराब बुनियादी ढांचे से निराश गुड़गांव के निवासी चुनाव उम्मीदवारों से किनारा कर रहे हैं।

कुमार चेलप्पन
(लेखक, दि पायनियर के विशेष संवाददाता हैं)

इस महीने गुरुग्राम में कई इलाकों में विरोध प्रदर्शन हुए हैं, जिसमें निराश और निराश निवासियों ने कहा है- चुनाव उम्मीदवारों का स्वागत नहीं, विकास नहीं तो वोट नहीं। गुड़गांव के निवासी इस बात से नाराज हैं कि करों (राज्य में सबसे अधिक हिस्सा) का भुगतान करने के बावजूद उन्हें उचित व्यवहार नहीं मिल रहा है। जनता के मूड को भांपते हुए भाजपा के दिग्गज और पांच बार के सांसद राव इंद्रजीत सिंह और कांग्रेस उम्मीदवार राज बब्बर ने विकास को अपना चुनावी मुद्दा बनाया है। दिलचस्प बात यह है कि हालांकि यह राष्ट्रीय चुनाव है, लेकिन ध्यान स्थानीय मुद्दों पर ही केंद्रित है, खासकर केंद्रीय राष्ट्रीय चुनाव विषय की अनुपस्थिति में। गुड़गांव को %मिलेनियम सिटी% और %साइबर सिटी% जैसे आकर्षक टैग मिल सकते हैं, लेकिन जिस शहर ने वैश्विक पहचान बनाई है, उसमें भौतिक और सामाजिक बुनियादी ढांचे की कमी है। शहर के कचरे के अलावा निर्माण मलबे के कारण यह एक बदसूरत चेहरा पेश करता है, जो गंभीर स्वास्थ्य खतरा पैदा करता है।

यह सिर्फ गुड़गांव ही नहीं है, यहां तक कि शहर के नए सेक्टर भी खराब रखरखाव वाली सड़कों (दुर्घटनाओं और धूल प्रदूषण के कारण), अपर्याप्त पेयजल, बिजली और सीवरेज बुनियादी ढांचे से जूझ रहे हैं। उचित जल निकासी के अभाव में। नागरिक अधिकारियों की विफलता ने मामले को बदतर बना दिया है। शहर में पर्याप्त मेट्रो नेटवर्क की कमी ने सड़कों पर यातायात की गड़बड़ी पैदा कर दी है। उचित पार्किंग बुनियादी ढांचे की कमी ने मामलों को और खराब कर दिया है। शहर के बहुत सारे नागरिक बुनियादी ढांचे की समस्याएँ बुनियादी ढांचे के विकास से पहले रियल एस्टेट विकास के दोषपूर्ण विकास मॉडल के कारण हैं। इसके अलावा, पड़ोसी नोएडा के विपरीत जहां एक ही विकास प्राधिकरण है, गुड़गांव इस मोर्चे पर पीछे है। विकास प्राधिकरणों की बहुलता को समाप्त करने के लिए गठित जीएमडीए (गुड़गांव महानगर विकास प्राधिकरण) विकास के मुद्दे पर वोट मांगते हुए राव इंद्रजीत सिंह केएमपी एक्सप्रेसवे, दिल्ली-मुंबई एक्सप्रेसवे (गुड़गांव से होकर गुजरने वाला), सोहना एलिवेटेड एक्सप्रेसवे, द्वारका एक्सप्रेसवे, मेट्रो विस्तार, गुड़गांव रेलवे स्टेशन अपग्रेडेशन जैसी मेगा इंफ्रास्ट्रक्चर और कनेक्टिविटी परियोजनाओं को शुरू करने का श्रेय लेते हैं।

ग्रामीण और मुस्लिम बहुल नूंह में वे मतदाताओं को दिल्ली-मुंबई एक्सप्रेसवे और ऑर्बिटल रेल जैसी प्रमुख इंफ्रास्ट्रक्चर परियोजनाओं के विकास लाभों के बारे में बता रहे हैं। दूसरी ओर, राज बब्बर भी राव इंद्रजीत का मुकाबला करने के लिए विकास कार्ड खेल रहे हैं, शहर में कई नागरिक मुद्दों के साथ घटिया विकास की ओर इशारा करते हुए इसे झुग्गी बस्ती में बदल रहे हैं। मेट्रो विस्तार में लंबी देरी, अंतरराज्यीय बस टर्मिनल की कमी और उपयुक्त सिविल अस्पताल की अनुपस्थिति उन मुद्दों में से हैं, जिन्हें वे मतदाताओं के बीच उठा रहे हैं और विकास के उचित हिस्से की मांग कर रहे हैं। वे गुड़गांव के परिवर्तन का वादा कर रहे हैं।

हालांकि राव इंद्रजीत सिंह को सत्ता विरोधी लहर का सामना करना पड़ सकता है, लेकिन मोदी फैक्टर के अलावा उनके पास एक सुव्यवस्थित संगठन का स्पष्ट लाभ है। दूसरी ओर, राज बब्बर को बाहरी होने की चुनौती का सामना करना पड़ रहा है। इसके अलावा, उनके नामांकन की घोषणा में देरी के कारण उन्हें देर से चुनाव लड़ने का नुकसान भी उठाना पड़ रहा है।

गुड़गांव के मतदाता मोदी की मजबूत विकास समर्थक साख पर भरोसा करते हुए भाजपा को एक और मौका देने के मूड में हैं। हालांकि, उन्होंने राजनीतिक दलों के प्रति अपनी नाराजगी भी जताई है। दरअसल गुड़गांव का बुनियादी ढांचा ठीक नहीं है और इस पर तुरंत ध्यान देने की जरूरत है। इसके अलावा, उनके गुस्से ने राजनेताओं को उनकी परेशानियों पर ध्यान देने के लिए प्रेरित किया है और अब वे बुनियादी ढांचे के उन्नयन में रुचि दिखाने लगे हैं।

आप की बात

ताइवान में तनाव

'ताइवान के चारों ओर बड़े पैमाने पर युद्धाभ्यास कर चीनी सेनाओं ने न केवल ताइवान को धमकाया है बल्कि उसका समर्थन करने वाले देशों को भी शक्ति प्रदर्शन से डराने का प्रयास किया है। इस समय दुनिया में खतरनाक रूप से युद्ध की परिस्थितियां बन रही हैं। रूस-यूक्रेन और इज़राइल-हमास युद्ध ने समूचे विश्व को हैरान परेशान कर रखा है। ऐसे में भी चीन का अन्य देशों पर आधिपत्य जमाने का उतावलापन विश्व को और खतरनाक स्थिति में धकेल रहा है। ताइवान की जनता ने चीन के खिलाफ मतदान करके अपना फैसला बता दिया है तो चीन जोर जबरदस्ती से उसे हथियाने पर क्यों आमादा है? चीन ताइवान को अपना ही हिस्सा मानता है और अपनी आर्थिक शक्ति के बल पर उसने अमेरिका समेत दूसरे देशों को ताइवान को स्वतंत्र देश न मानने को मजबूर किया है। गिने-चुने देश ही ताइवान को स्वतंत्र देश मानते हैं। ऐसे में यदि अमेरिका समेत अन्य शक्तिशाली देश चीन का ताइवान के मुद्दे पर खुलकर विरोध नहीं करते हैं तो उसकी खुराफातें बढ़ती जाएगी। चीन का हौसला रूस-यूक्रेन युद्ध में पुतिन की बढ़त तथा रूस पर वैश्विक प्रतिबंधों के निष्प्रभावी होने से और बढ़ा है। ऐसे में भारत को पूरी स्थिति पर नजर रखते हुए अपनी सीमा सुरक्षा और मजबूत करनी चाहिए।

-विभूति बुपक्या, खाचरोद

शिक्षकों की समस्या

शिक्षक की पिटाई और माता-पिता की डांट-फटकार के कारण किशोर-किशोरियों की आत्महत्या की घटनायें अक्सर सामने आती हैं। लेकिन अतार्किक रूप से इसका दोष शिक्षकों पर मढ़ देना उचित नहीं है। शिक्षकों द्वारा दंड देने पर शिक्षकों को छात्रों और उसके परिजनों द्वारा अपमानित करना तो सामान्य सी बात हो गयी है। कांग्रेस शासनकाल में पास कानून ने शिक्षकों को छात्रों को शारीरिक दंड देने से प्रतिबंधित कर दिया। इसे एक सीमा तक सही भी कहा जा सकता है। लेकिन इस कानून ने शिक्षक को इतना मजबूर बना दिया कि वह छात्र अनुशासनहीनता करने पर भी दंड नहीं दे सकता है। इसके परिणाम स्वरूप कुछ छात्रों में उद्दण्डता की भावना बढ़ती है। इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता है कि पिछले दशकों में समाज में शिक्षकों का सम्मान घटा है और उनको किसी अन्य वेतनभोगी कर्मचारी जैसा मान लिया गया है। अधिकांश शिक्षक आज भी छात्रों-छात्राओं को अपने परिवार की तरह मान कर उनके सर्वांगीण विकास की चिन्ता करते हैं। ऐसे में उनके द्वारा छात्रों को दंड देने को संवेदनहीन ढंग से आपराधिक मामला बनाना उचित नहीं है। इससे शिक्षकों में भी संवेदना और सहानुभूति में कमी आती है।

- नरेन्द्र टोंक, मेरठ

खाद्य पदार्थों में मिलावट

खाद्य पदार्थों में मिलावट की समस्या गंभीर है। 140 करोड़ की आबादी वाले देश में खाद्य पदार्थों के सैंपल के लिए मात्र 200 लैबोरेट्री काम कर रही है, जबकि प्रत्येक जिला मुख्यालय पर एक लैबोरेट्री होना चाहिए। इनको न सिर्फ खाद्य निरीक्षकों द्वारा लिए गए नमूनों की जांच करनी चाहिए, बल्कि आम जनता द्वारा भी बाजार से खरीदे जाने वाली सभी खाद्य वस्तुओं, जैसे दूध, नमकीन, मिठाइयों, आदि की जांच शुल्क देकर करने की सुविधा देनी चाहिए। खाद्य विभाग मे व्याप्त भारी भष्टाचार अब किसी से छिपा नहीं है। अक्सर दूकानदार यह कहते मिल जाएंगे कि खाद्य निरीक्षक वसूली के लिए ही नमूने भरते हैं तथा बाकी समय खाद्य पदार्थों की मिलावट के प्रति आंखें बंद किए रहते हैं। कहा जाता है कि वे दूकानदारों से हफ्ता वसूल करते हैं। पैक मसालों व अन्य ब्रांडेड वस्तुओं पर जनता आंख मूंदकर विश्वास करती है, पर उनमें से भी अनेक के मामले अधोमानक या हानिकारक पाए जाते हैं। खाद्य पदार्थों में मिलावट रोकने के लिए कठोर मानकों के साथ इनका उल्लंघन करने वालों को इतने कठोर दंड के प्राविधान होने चाहिए जिससे वे आम जनता के स्वास्थ्य व जीवन के साथ खिलवाड़ करने की हिम्मत ही न कर सकें।

सुभाष बुड़ावन वाला, रतलाम

ओवैसी की स्वीकारोक्ति

राजनीतिक विश्लेषक प्रशांत किशोर ने महागठबंधन की कमजोरियों के मद्देनजर फिर से नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में सरकार बनने की भविष्यवाणी की है। अब एआईएमआईएम प्रमुख असदुद्दीन आवैसी ने भी यूपी की एक सभा में कहा कि तीसरी बार भी नरेंद्र मोदी प्रधानमंत्री बनेंगे। आवैसी की स्वीकारोक्ति से स्पष्ट है कि इंडिया गठबंधन में शामिल मोदी के धुरंधर विरोधी नेता अपनी सरकार बनाने की जो डींगें हांक रहे हैं, वे केवल अपने कार्यकर्ताओं का हौसला बढ़ाने के लिए ही हैं। वैसे वे भी जानते हैं कि अब की बार भी देश में मोदी सरकार ही काबिज होने वाली है। इस तरह प्रशांत किशोर के पश्चात् लो अब ओवैसी की स्वीकारोक्ति से विपक्षी नेताओं के सारे बयान निरर्थक सिद्ध हो गए हैं। वैसे भी शेयर बाजार और सटोरियों ने भी मोदी सरकार बनने के संकेत दे दिए हैं। अब अंतिम चरण का चुनाव बाकी है और सारी जनता को 4 जून को आने वाले नतीजों की प्रतीक्षा है। इसके पहले देखना होगा कि एक जून को मतदान के अंतिम चरण के बाद टीवी चैनलों पर आने वाले एक्जिट पोल चुनाव परिणामों की क्या तस्वीर पेश करते हैं।

- दीप्ति प्रदीप बंदवार, रतलाम

पाठक अपनी प्रतिक्रिया ई-मेल से
responsemail.hindipioneer@gmail.com
पर भी भेज सकते हैं।

दैनिक जागरण

आसान कार्य भी आरंभ में कठिन लगता है

चलता है वाली संस्कृति

गुजरात के राजकोट शहर में एक गेमिंग जोन में लगी आग से 35 से अधिक लोगों की मौत लापरवाही और नियम-कानूनों की अनदेखी का ही नतीजा है। गुजरात हाई कोर्ट ने यह बिल्कुल सही कहा कि यह मानव जनित घटना है। इस भयावह घटना में कई बच्चे भी काल का शिकार बने हैं। यह ठीक है कि गुजरात सरकार ने विशेष जांच दल का गठन कर दिया और गेमिंग जोन के संचालकों की गिरफ्तारी कर ली गई है, लेकिन इतने मात्र से बात बनने वाली नहीं है। प्रश्न यह है कि यह गेमिंग जोन अग्निशमन विभाग के अनापत्ति प्रमाण पत्र के बिना कैसे चल रहा था। इसी तरह प्रश्न यह भी है कि गेमिंग जोन ने नगर निगम से कोई अनुमोदन अथवा लाइसेंस क्यों नहीं ले रखा था। वास्तव में जब तक अग्निशमन विभाग और नगर निगम के अधिकारियों को इस घटना के लिए जवाबदेह बनाने के साथ दंड का भागीदार नहीं बनाया जाता तब तक सही तरह न्याय नहीं होने वाला।

आग से बचाव के उपायों की अनदेखी के कारण दुर्घटना की यह कोई पहली घटना नहीं है। इस तरह की घटनाएं देश के विभिन्न हिस्सों में रह-रहकर होती ही रहती हैं। उनमें लोग जान भी गंवाते रहते हैं, लेकिन सभी जिम्मेदार लोगों के खिलाफ कार्रवाई मुश्किल से ही हो पाती है। चिंताजनक यह है कि इस तरह के मामले बढ़ते ही चले जा रहे हैं। गत दिवस ही देश की राजधानी में एक केयर सेंटर में आग लगने से छह नवजात बच्चों की मौत हो गई। इस घटना के मामले में भी यह सामने आया है कि आग से बचाव के पर्याप्त उपाय नहीं किए गए थे। जब देश के बड़े शहरों में यह स्थिति है तो कोई भी समझ सकता है कि छोटे शहरों में सुरक्षा के उपायों की कैसी उपेक्षा और अनदेखी होती होगी। राजकोट अथवा दिल्ली जैसी घटनाएं यही बताती हैं कि अपने देश में चलता है की संस्कृति खत्म होने का नाम नहीं ले रही है। यह संस्कृति इसलिए खत्म नहीं हो रही, क्योंकि जिम्मेदारी और जवाबदेही तय करने के स्थान पर लीपापोती की प्रवृत्ति कायम है। निःसंदेह इस तरह की घटनाएं देश की बदनामी कराती हैं और भारत को एक ऐसे देश के रूप में रेखांकित करती हैं जहां भ्रष्टाचार, सुरक्षा उपायों की अनदेखी, नियम-कानूनों के उल्लंघन, लोगों में अनुशासन की कमी आदि के चलते रह-रहकर घटनाएं होती ही रहती हैं। इस सिलसिले को बंद किए बगैर भारत को वास्तव में एक विकसित राष्ट्र बनाना कठिन होगा। यदि भारत को सचमुच विकसित राष्ट्र के रूप में उभरना है तो हर स्तर पर नियम-कानूनों का पालन सुनिश्चित किया जाना आवश्यक है। इस आवश्यकता की जितनी पूर्ति सरकारी तंत्र को करनी होगी, उतनी ही आम लोगों को भी।

अविश्वास भी अच्छा है

बढ़ते साइबर अपराध आम लोगों को आर्थिक नुकसान पहुंचाने के साथ उनकी मानसिक शांति को भी भंग कर रहे हैं। ये अपराध अनूठेपन के कारण पुलिस की नाक में भी दम किए हुए हैं। इनमें दो-तीन चीजें एक जैसी होती हैं इसलिए पहली बार अविश्वास करके भी इनसे इनसे बचा जा सकता है। इसके लिए जागरूकता और दिमाग को शांत-संयत रखना बहुत जरूरी है। रिश्तेदार या परिचित बनकर आपात स्थिति बताकर अपने खातों में रुपये ट्रांसफर करवाने वाले नजदीकी बनकर धोखा करते हैं। वे आम आदमी की जानकारियां इंटरनेट प्लेटफार्म से एकत्र करते हैं और उसी आधार पर झांसा दे देते हैं। इसके अलावा अब आवाज की हूबहू नकल करने वाले या फिर फोटो, वीडियो में छेड़छाड़ कर ठगी के मामले बढ़े हैं। मध्य प्रदेश के सीधी जिले में तो अपराधियों ने कालेज छात्राओं को बदली हुई आवाज में झांसा देकर उनके साथ दुष्कर्म जैसे घिनौने अपराध को अंजाम दे दिया। बेहद सामान्य लोगों को पुलिस कार्रवाई या फिर अविश्वसनीय अपराधों से बचाने का झांसा देने के नाम पर पहले डराने के लिए डिजिटली अरेस्ट करना और फिर बचाने के लिए लाखों रुपये ऐंठ लेने के मामले सामने आए हैं। अविश्वसनीय लाभ, एटीएम कार्ड ब्लाक होने और विविध आफर के नाम पर ठगी के तो हजारों मामले सामने आ चुके हैं। पुलिस अधिकारी एवं एजेंसियां भी आगाह करती हैं कि किसी भी लुभावने या भयभीत करने वाली बातों पर एकदम से विश्वास न करें। यदि कोई किसी के नाम पर आपात स्थिति की वजह से रुपये मांग रहा है तो सीधे उसी व्यक्ति से बात कर स्थिति स्पष्ट कर लें। लुभावने आफर, कई गुना फायदा आदि पर भी अविश्वास करें। ऐसा करने से आप ठगी से काफी हद तक बच सकते हैं। साइबर अपराध की दुनिया में अविश्वास भी फायदेमंद हो सकता है। साइबर अपराधी वैसे भी काफी दूर होते हैं और केवल आदमी के दिमाग से खेलते हैं इसलिए विचार करना, एकबारगी किसी पर भरोसा न करना और पुष्टि करने से काफी हद तक इनसे बचा जा सकता है।

समृद्ध और सशक्त भारत की रूपरेखा

विवेक देवराय

व्यापक सुधारों, समावेशी वृद्धि और जनसांख्यिकीय एवं आर्थिक संभावनाओं का लाभ उठाकर समृद्ध-विकसित राष्ट्र का सपना साकार किया जा सकता है

आदित्य सिन्हा

अवधेश राजपूत

भारत की आजादी को 2047 में पूरे सौ वर्ष हो जाएंगे। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने उस पड़ाव तक पहुंचने से पहले देश को विकसित राष्ट्र बनाने का संकल्प लिया है। इस संकल्प की पूर्ति के प्रयासों के लिए इस अवधि को अमृतकाल का नाम दिया गया है। चूंकि किसी भी राष्ट्र के विकसित होने की एक प्राथमिक कसौटी उसकी आर्थिक प्रगति से निर्धारित होती है तो इस पैमाने पर भारत के सकल घरेलू उत्पाद यानी जीडीपी की दशा-दिशा पर दृष्टि डालनी होगी। वर्ष 2024 तक भारत की प्रति व्यक्ति आय लगभग 2,700 डालर तो प्रति व्यक्ति क्रय शक्ति क्षमता यानी पीपीपी आय करीब 10,120 डालर है। भारत की जीडीपी कुल 3.9 ट्रिलियन (लाख करोड़) डालर और (आधिकारिक विनिमय दरों पर) करीब 14.6 ट्रिलियन डालर है। ये आंकड़े भारत के व्यापक आर्थिक प्रभाव को रेखांकित करते हैं। वर्ष 2018-19 के इकोनमिक सर्वे में वर्ष 2024-25 तक भारत को पांच ट्रिलियन डालर की आर्थिकी बनाने के लिए (चार प्रतिशत की अनुमानित मुद्रास्फीति के साथ) आठ प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि की आवश्यकता बताई गई थी। इसी बीच कोविड महामारी ने उस योजना को बेपटरी कर दिया। इसके बावजूद भारत की आर्थिक आकांक्षाएं उसी प्रकार कायम हैं, जिसमें सतत एवं समावेशी वृद्धि पर ध्यान केंद्रित हैं।

देश की आर्थिक वृद्धि की गति के हिसाब से 2047 तक प्रति व्यक्ति आय कम से कम 10,000 डालर और आर्थिकी का आकार 20 ट्रिलियन डालर तक पहुंचने का अनुमान है। इस वृद्धि से भारत निम्न-मध्यम-आमदनी वाले देश की श्रेणी से निकलकर उच्च-मध्यम-आय वाली श्रेणी में पहुंचकर उच्च आय वाले दर्जे के निकट पहुंच जाएगा। इसी दौरान भारत ने मानव विकास की श्रेणी में ऊंची छलांग के लिए भी रणनीति बनाई है। अभी भारत में जीवन प्रत्याशा 70.8 वर्ष है जो वर्ष 2047 तक बढ़कर 78 वर्ष होने की उम्मीद है। यह उपलब्धि स्वास्थ्य सेवाओं में आशातीत सुधार से संभव होती दिख रही है। इसके अतिरिक्त शिक्षा से जुड़े सुधार भी व्यापक रूप से प्रगति पर अपनी छाप छोड़ेंगे। उद्योगीकरण के साथ ही डिजिटल इकोनमी की वृद्धि को प्रोत्साहन देने वाली आर्थिक नीतियां भी उपयोगी सिद्ध होंगी।

विकसित भारत के अपेक्षित लक्ष्य को हासिल करने की दिशा में कुछ रणनीति आवश्यक लग रही हैं। इसमें सर्वप्रथम वस्तु एवं सेवा कर यानी जीएसटी को सुसंगत बनाना होगा। इसमें पेट्रोलियम और रियल एस्टेट जैसे उन क्षेत्रों को भी जोड़ना होगा जो अभी तक इसमें शामिल नहीं। इससे सक्षमता का स्तर और बढ़ेगा। इसके साथ जीएसटी को छह, 12 और 18 प्रतिशत की तीन श्रेणियों में विभाजित करने से अनुपालन लागत एवं विवाद घटेंगे। रियायतों को समाप्त कर निजी एवं कारपोरेट करों को सरल बनाया जाए, जिससे समानता का स्तर बढ़ने के साथ ही मुकदमेबाजी घटेगी और पारदर्शी कर व्यवस्था बनेगी। इससे जीडीपी के अनुपात में करों की हिस्सेदारी 18 से बढ़कर 23 प्रतिशत तक पहुंचने का अनुमान है, जिससे सार्वजनिक वस्तुओं एवं सेवाओं में और निवेश बढ़ने की राह खुलेगी।

आर्थिक वृद्धि की गति बनाए रखने के लिए निजी क्षेत्र के निवेश में निरंतरता आवश्यक है। वर्ष 2024 तक भारत में सकल नियत पूंजी निर्माण करीब 28 प्रतिशत के स्तर पर है। देश में उत्पादकता वृद्धि की दर पांच प्रतिशत है, जबकि जनसांख्यिकीय लाभांश के चलते बड़ी कामकाजी आबादी से भारी वृद्धि की संभावनाएं और जगती हैं। जीडीपी में करीब 20 प्रतिशत का योगदान देने वाले निर्यात को भी बढ़ाना होगा। बुनियादी ढांचे में सुधार, कारोबारी नियमनों का सुगम होना और लाभकारी व्यापार समझौतों से निर्यात में वृद्धि के साथ ही एफडीआइ में तेजी आने के भरे-पूरे आसार हैं। फिलहाल देश में 60 अरब डालर सालाना के हिसाब से एफडीआइ आ रहा है।

भारत में श्रम कार्यबल की भागीदारी करीब 46 प्रतिशत है, जिसमें महिलाओं की भागीदारी 23 प्रतिशत है। चूंकि कामकाजी आबादी के स्तर पर 53 प्रतिशत लोग औपचारिक प्रशिक्षण से वंचित हैं तो कौशल विकास कार्यक्रम बेहद अहम हो जाते हैं। करीब 80 प्रतिशत रोजगार प्रदान करने वाले असंगठित क्षेत्र को संगठित स्वरूप प्रदान करने से रोजगार सुरक्षा में सुधार के साथ ही उत्पादकता भी बढ़ेगी। तकनीक संचालित प्लेटफार्म मांग की तुलना में आपूर्ति करके बेरोजगारी को घटा सकते हैं। श्रम उत्पादकता वृद्धि में सालाना पांच प्रतिशत से अधिक की वृद्धि आर्थिक दायरे में भारी विस्तार करेगी।

चूंकि भारत में शहरीकरण 34 प्रतिशत की दर से बढ़ रहा है तो सक्षम नगरीय निकाय शासन बहुत आवश्यक हो जाता है। इस दिशा में डिजिटल सर्वे के माध्यम से भू रिकार्ड का आधुनिकीकरण पारदर्शिता बढ़ाने के साथ ही विवादों को घटाएगा। भू-उपयोग की सुसंगत नीतियां बेहतर विकास की आधारशिला रखेंगी। इसलिए स्थानीय सरकारों का सशक्तीकरण समावेशी वृद्धि के लिए अपरिहार्य है। स्थानीय स्तर पर स्वायत्तता और विकेंद्रीकरण बढ़ाने से जिम्मेदार एवं जवाबदेह शासन को बढ़ावा मिलेगा। स्थानीय बुनियादी ढांचे एवं सेवाओं में सुधार से संतुलित क्षेत्रीय विकास सुनिश्चित होने के साथ ही बड़े पैमाने पर हो रहे शहरी पलायन के बढ़ते दबाव को भी कम किया जा सकेगा।

इस समय भारत का सार्वजनिक व्यय जीडीपी का 27 प्रतिशत है। इसलिए व्यय की प्राथमिकता तय करना और स्वास्थ्य एवं शिक्षा जैसी सामाजिक सेवाओं के साथ ही बुनियादी ढांचे पर ध्यान बेहतर परिणाम प्रदान कर सकता है। इस दिशा में विभिन्न सरकारी विभागों के बीच व्यय में तालमेल बिठाने के लिए सार्वजनिक व्यय परिषद का गठन उपयोगी होगा। इस रणनीतिक आवंटन से बुनियादी ढांचा और सामाजिक सेवाओं में सुधार के साथ ही उनकी गुणवत्ता एवं उन तक पहुंच की स्थिति सुधरेगी।

वर्ष 2047 तक भारत की यात्रा परिवर्तन एवं अवसरों से भरी है। व्यापक सुधारों, समावेशी वृद्धि और जनसांख्यिकीय एवं आर्थिक संभावनाओं का लाभ उठाकर एक समृद्ध एवं विकसित राष्ट्र का सपना साकार किया जा सकता है। इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए प्रतिबद्धता, रणनीतिक योजनाओं के साथ ही सही समन्वय आवश्यक होगा। उचित दृष्टि और दृढ़ता के साथ भारत एक वैश्विक लीडर के रूप में उभर सकता है।

(देवराय प्रधानमंत्री की आर्थिक सलाहकार परिषद के प्रमुख और सिन्हा परिषद में ओएसडी-अनुसंधान हैं)

response@jagran.com

जजों की छुट्टियों पर बेजा बहस

डा.ब्रजेश कुमार तिवारी

कानूनी संस्कृति में व्यापक बदलाव के बिना केवल जजों की छुट्टियों में कटौती करने से कुछ हासिल नहीं होने वाला

मात्र अदालतों तक ही नहीं सिमटा न्यायिक कार्य। फाइल

सुप्रीम कोर्ट में गर्मी की छुट्टियां शुरू हो गई हैं। अब जुलाई में फिर से कोर्ट खुलेगा। अधिकांश हाई कोर्ट एवं जिला अदालतें भी गर्मी की छुट्टियों की वजह से जून में बंद रहेंगी, वहीं ठंड वाले राज्यों में सर्दी की छुट्टियां दिसंबर या जनवरी में होती हैं। ऐसा नहीं कि छुट्टियों में कोर्ट में सुनवाई नहीं होती। इसके लिए वैकेशन बेंच बनाई जाती है। यह बेंच त्वरित मामलों की सुनवाई करती है। वर्तमान में सुप्रीम कोर्ट में प्रति वर्ष औसतन 193 कार्यदिवस हैं, जबकि उच्च न्यायालयों में 210 दिन और जिला अदालतों में 245 कार्यदिवस हैं। भारत उन देशों में है जहां न्यायपालिका साल में सबसे ज्यादा दिन काम करती है। अमेरिका, आस्ट्रेलिया, कनाडा, सिंगापुर और ब्रिटेन में शीर्ष अदालतें क्रमशः 79, 97, 120, 145 और 189 दिनों तक बैठती हैं। भारत का सुप्रीम कोर्ट प्रतिदिन कम से कम 10-15 फैसले देता है, वहीं अमेरिका का सुप्रीम कोर्ट एक वर्ष में अधिकतम 10-15 निर्णय देता है।

भारतीय उच्चतम न्यायालय में 31 दिसंबर, 2023 तक 80,000 से अधिक तो उच्च न्यायालयों में 61 लाख से अधिक मामले लंबित थे, जबकि जिला अदालतों में कुल लंबित मामले 4.32 करोड़ से अधिक थे। पिछले कुछ वर्षों से भारत की अदालतों में लंबित मामलों की भारी संख्या को देखते हुए जजों की छुट्टियों को कम करने की लगातार मांग की जा रही है। दरअसल जो लोग कोर्ट की कार्यप्रणाली को नहीं जानते, वही इसकी मांग करते हैं। अधिकांश को तो यह भी नहीं पता कि न्यायाधीश कैसे काम करते हैं। वास्तव में इन 'छुट्टियों' के दौरान ही न्यायाधीश आरक्षित निर्णयों के लंबित आदेशों को पूरा करते हैं। अपने चैंबर में या घर पर बने दफ्तर में बैठकर तमाम मामलों में जजमेंट लिखवाते हैं। इनको लिखवाने से पहले उन्हें पूरे केस की फाइल और तमाम जिरह को देखना होता है। मामले से संबंधित तमाम पुराने जजमेंट भी पढ़ने होते हैं। देखा जाए तो यह देश का सबसे कठिन काम है। न्यायाधीशों द्वारा बोले या लिखे गए प्रत्येक शब्द लोगों के जीवन को प्रभावित करते हैं। यह राजनेताओं द्वारा रिबन काटने और भाषण देने जैसा काम नहीं है, जिसका लोगों पर बहुत कम प्रभाव या कोई परिणाम नहीं होता है। हर हफ्ते औसतन 300 से अधिक मामलों की सुनवाई की तैयारी करना आसान नहीं है। ऐसा नहीं है कि न्यायाधीश सिर्फ दस से चार बजे तक ही कार्य करते हैं। वास्तव में एक न्यायाधीश का जीवन अदालत के घंटों के बाद आम जनता से छिपा होता है। न्यायाधीश आम तौर पर शाम, रात और सप्ताहांत में फाइलें पढ़ने, आदेश लिखने, अन्य निर्णय और कानून की किताबें पढ़ने में बिताते हैं, क्योंकि जब अदालतें काम कर रही होती हैं तो न्यायाधीशों के पास ऐसा करने के लिए बहुत कम समय बचता है। कोर्ट यह कभी नहीं कहता कि छुट्टी है। ऐसे में कोर्ट से दूसरे सरकारी विभागों की छुट्टियों की तुलना करना ठीक नहीं है। यही कारण है कि तनाव प्रबंधन के लिए न्यायाधीशों को समय-समय पर आराम की आवश्यकता होती है और वकीलों को भी, क्योंकि वकील भी न्यायिक प्रक्रिया का महत्वपूर्ण हिस्सा हैं।

विशेषज्ञ मानते हैं कि भारतीय न्यायपालिका में जजों की संख्या में कमी मामलों के लंबित होने के लिए जिम्मेदार है। उनकी छुट्टियों को दोष देने की जगह न्यायपालिका को ज्यादा संसाधन उपलब्ध कराया जाना ही इस समस्या का समाधान है। कानून मंत्रालय के अनुसार एक अक्टूबर, 2023 तक जिला अदालतों में कुल 5,388 पद (21 प्रतिशत) खाली थे। ऐसे ही उच्च न्यायालयों में 1,114 न्यायाधीशों की स्वीकृत संख्या के मुकाबले 347 न्यायाधीशों के पद (31 प्रतिशत) खाली थे। भारत में न्यायाधीश-जनसंख्या अनुपात में भी भारी अंतर है। यह 2020 में प्रति 10 लाख लोगों पर 21 न्यायाधीश का था। जबकि 1987 में विधि आयोग ने सुझाव दिया था कि 10 लाख नागरिकों के लिए 50 न्यायाधीश होने चाहिए। अमेरिका में प्रति दस लाख लोगों पर 107 न्यायाधीश हैं और ब्रिटेन में 51 न्यायाधीश हैं। जब तक इस अनुपात को बेहतर नहीं बनाया जाता तब तक देश की अदालतों में लंबित मामलों की संख्या बढ़ती ही रहेगी। संविधान का अनुच्छेद-21 सभी नागरिकों को त्वरित न्याय का अधिकार देता है। ऐसे में जरूरत है कि सुप्रीम कोर्ट द्वारा की गई सिफारिशों पर सरकार समय पर कार्रवाई करे और नियुक्तियां करें। आज भी कई अदालतों में न्यायाधीशों, वकीलों, कर्मचारियों और वादियों के लिए बुनियादी ढांचे की कमी है। अदालतों में मुकदमेबाजी इसलिए भी बढ़ रही, क्योंकि ज्यादातर विभाग सही से काम नहीं कर रहे। कई बार स्कूलों की फीस, स्वच्छता, कुपोषण से लेकर सड़क के गड्ढे दुरुस्त करने तक के आदेश अदालतों को ही देने पड़ते हैं। न्याय विभाग द्वारा प्रकाशित 2017 के एक दस्तावेज में कहा गया है कि अदालतों में कुल लंबित मामलों का 46 प्रतिशत हिस्सा सरकार, सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों और अन्य स्वायत्त निकायों से संबंधित है। अब समय आ गया है कि सरकारें अपनी नीति में बदलाव करें, क्योंकि इससे न केवल कोर्ट का समय व्यर्थ होता है, बल्कि निरर्थक मुकदमेबाजी पर भारी मात्रा में सार्वजनिक धन बर्बाद होता है।

कुल मिलाकर देखें तो गर्मी हो या सर्दी की छुट्टियां, वे न्यायाधीशों या वकीलों में तनाव प्रबंधन का काम करती हैं, क्योंकि वे पूरे वर्ष जटिल कानूनी मुद्दों और सवालों को सुलझाने का काम करते हैं। संपूर्ण कानूनी संस्कृति में व्यापक बदलाव के बिना केवल जजों की छुट्टियों में कटौती करने से कुछ हासिल नहीं होने वाला।

(लेखक जेएनयू के अटल स्कूल आफ मैनेजमेंट में प्रोफेसर हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

लक्ष्य की स्पष्टता

जीवन उसी का सार्थक कहा जाएगा जिसने स्वयं को निरंतर परिष्कृत करते रहने की प्रवृत्ति बना ली है। ऐसे व्यक्ति का एक स्पष्ट लक्ष्य रहता है। उच्च लक्ष्य का निर्धारण उसे दैनंदिन प्रतिबद्ध, जीवंत और आश्वस्त रखता है। वह सभी इच्छित कार्य मनोयोग से संपन्न करता और तदनुसार फल पाता है। जीवन में आने वाली बाधाएं उसे परास्त नहीं करतीं। उसे लक्ष्य तक पहुंचने से कोई शक्ति नहीं रोक सकती, जिसने एक स्पष्ट लक्ष्य ठान रखा है और जो निष्ठा से अविरल उस दिशा में कार्यरत है। लक्ष्य जितना व्यापक, गरिमामय और दूरदर्शितापूर्ण होगा उसी अनुपात में उलझनों से मुक्त रहेंगे। लौकिक लक्ष्य के पीछे प्रायः निजी स्वार्थ रहता है, जैसे शैक्षिक परीक्षाओं में उत्कृष्ट परिणाम, उच्च पैकेज की नौकरी, पदोन्नति, लाटरी लगना, गंभीर बीमारी या मुकदमेबाजी से छुटकारा, भूखंड या फ्लैट का स्वामित्व, संतान की प्राप्ति या उसका विवाह आदि। सांसारिक लक्ष्यों में एक भारी कमी रहती है। एक पूरा होता नहीं कि तुरंत दूसरा प्रकट हो जाता है, लेकिन वह भी उच्च कोटि का नहीं होता। जितना महत्वपूर्ण लक्ष्य है उतना ही महत्वपूर्ण इसकी प्राप्ति का मार्ग। लक्ष्य प्राप्ति में गलत उपायों का प्रयोग सुफल नहीं देता।

जनकल्याण से संबद्ध लक्ष्य सर्वोच्च कोटि का होता है। इससे समाज को लाभ मिलता है। इंजीनियरिंग, चिकित्सा या कारोबारी क्षेत्र कम समय या लागत में प्रभाव देने वाले उत्पाद विकसित करें तो व्यापक स्तर पर उपभोक्ता लाभान्वित होंगे। परहित में निरत व्यक्ति पुण्य का भागी होता है। ईश्वरीय शक्तियां भी उसे सहयोग देती हैं। चित्त को डोलाते, पारिवारिक संबंधों को क्षीण करते, सांस्कृतिक मूल्यों से दुराव बढ़ाते आज के समाज में उन लक्ष्यों से अभिप्रेरित व्यक्तियों की आवश्यकता है, जो हमें सन्मार्ग पर अग्रसर रहने का संबल प्रदान करें।

हरीश बड़थ्वाल

कामकाजी महिलाओं की सुरक्षा

सुनीता मिश्रा

गर्भावस्था और मासिक धर्म के दौरान महिला कर्मचारी लंबे समय तक लगातार कठिन श्रेणी के कार्य नहीं कर सकतीं

ड्यूटी के दौरान गर्भपात का सामना करने वाली महिला ट्रेन चालकों के एक समूह ने रेलवे बोर्ड से गर्भवती कर्मचारियों को इस अवधि में हल्के और दफ्तर में बैठकर वाले किए जाने वाले काम देने की अपील की है। उनका कहना है कि मातृत्व लाभ (संशोधन) अधिनियम, 2017 के तहत इस सुविधा की अवधि में उन्हें कार्यालय संबंधी गैर खतरनाक कार्य करने को दिए जाने चाहिए। इसके लिए उनका दूसरे विभाग में तबादला किया जाना चाहिए। रेलवे अधिनियम और मातृत्व लाभ अधिनियम की धारा चार में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि महिला कर्मचारियों को खतरनाक और कठिन श्रेणी के कार्य करने के लिए नहीं कहा जा सकता है। कठिन श्रेणी में लंबे समय तक खड़े रहना, बैठे रहना, बार-बार केबिन की सीढ़ियां चढ़ना, भारी सामान उठाने जैसे कई कार्यों को शामिल किया गया है। ये कार्य गर्भवती महिला के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं, जिससे भ्रूण के सामान्य विकास में बाधा उत्पन्न होने और गर्भपात का खतरा अधिक होता है।

वर्तमान में भारतीय रेलवे में 13 लाख से अधिक कर्मचारी कार्यरत हैं, जिनमें 1500 से अधिक महिलाएं देश भर के विभिन्न रेलवे जोनों में लोको पायलट और सहायक लोको पायलट के रूप में कार्य कर रही हैं। ये महिला कर्मचारी लंबे समय से ड्यूटी के दौरान न मिलने वाली बुनियादी सुविधाओं की शिकायत करती रही हैं। खासतौर पर गर्भावस्था और मासिक धर्म के दौरान उन्हें कई कठिन परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है, क्योंकि इस वक्त वे लंबे समय तक लगातार नहीं बैठ सकती हैं। पिछले महीने भी महिला ट्रेन चालकों ने रेलवे बोर्ड से आग्रह किया था कि या तो उनकी दयनीय कामकाजी परिस्थितियों में सुधार किया जाए या फिर उन्हें अन्य विभागों में स्थानांतरित करने की अनुमति दी जाए। इसके साथ ही महिलाकर्मियों ने इंजन में शौचालय सुविधाओं की कमी, मासिक धर्म के समय सैनिटरी पैड नहीं बदल पाने और नाइट ड्यूटी के लिए आवास से लाने-पहुंचाने की सुविधा नहीं होने जैसी समस्याओं का उल्लेख किया था।

महिला रेलकर्मियों को भी दफ्तर में काम करने का अवसर मिलना चाहिए। सुविधाओं के अभाव, काम के घंटों की अनिश्चितता और आराम के समय की कमी के कारण गर्भवती महिला कामगारों के लिए काम करना मुश्किल हो जाता है। ऐसे में उनका दूसरे विभाग में तबादला करने के साथ-साथ रेलवे को महिला कर्मचारियों को शौचालय सहित अन्य सभी तरह की सुविधाएं मुहैया कराने पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है, ताकि कोई भी कामकाजी महिला गर्भपात की शिकार न होने पाए। इससे ज्यादा महिलाएं रेलवे में कार्य करने को इच्छुक होंगी।

(लेखिका स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं)

मेलबाक्स

देशहितैषी सार्थक मुद्दों पर भी बहस हो

शिवकांत शर्मा के आलेख 'आरोपों-प्रत्यारोपों में ओझल सार्थक मुद्दे' में जिस महत्वपूर्ण विषय को उठाया गया है, वह सत्ता पक्ष और विपक्ष दोनों के लिए विचारणीय होना चाहिए। 2024 के लोकसभा चुनाव में एक ओर सत्ता पक्ष का एनडीए है तो दूसरी ओर विपक्षी दलों का आइएनडीआइए। देश की सत्ता पर काबिज होने के लिए सत्ता पक्ष और विपक्ष के अपने-अपने दावे हैं। इस परिदृश्य को देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि देश के आम चुनाव से देशहितैषी मुद्दे गायब हो गए हैं और उनके स्थानापन्न एक दूसरे को दोषारोपित करने का दौर बदस्तूर जारी है। जबकि देश का जागरूक मतदाता यह जानने के लिए आतुर है कि पक्ष-विपक्ष के दावे के अनुरूप सत्ता पर काबिज होने वाला देश का भावी नेतृत्व शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य, सुरक्षा जैसे महत्वपूर्ण मुद्दों को लेकर क्या सोच रखता है? हालांकि हर दल का अपना चुनावी एजेंडा है, लेकिन इन एजेंडों में मुफ्तखोरी की लोकलुभावन घोषणाओं के इतर कुछ भी ऐसा नहीं है जिसमें देश की बेहतरी का कोई विजन हो। इस संबंध में शायद पहली बार आत्मनिर्भर भारत की संकल्पना के साथ देश को विकसित राष्ट्र बनाने की बात प्रधानमंत्री मोदी ने की है। भाजपा के चुनावी एजेंडे में भी इस संकल्प को दोहराया गया है। इस संदर्भ में लेखक का यह सुझाव गौरतलब है कि पश्चिमी देशों की तर्ज पर भारत में भी सत्ता पक्ष और विपक्ष के प्रमुख नेताओं को टीवी पर आमने-सामने बैठकर देशहित के महत्वपूर्ण मुद्दों पर सकारात्मक बहस करनी चाहिए। ताकि देश के मतदाताओं को इनके विजन का आभास हो जाए।

डा. वीपी पांडेय, अलीगढ़ (उप्र)

किसको दें वोट?

मेरा वोट, मेरा अधिकार-ये नारा इन दिनों खूब चर्चा में है। कुछ युवा पहली बार वोट डालने के लिए उत्साहित हैं तो वहीं वरिष्ठ लोग पिछली सरकारों द्वारा किए गए कार्यों के आधार पर वोट डालने का मन बना रहे हैं। इन सबके बीच कुछ ऐसे भी लोग हैं जो आज भी अपनी जाति, धर्म या पार्टी के घोषणा पत्रों में किए गए वादों के आधार पर वोट देते हैं। इधर बड़े बड़े नेता सत्ता की चाह में एक दूसरे पर बयानबाजी में लगे हैं। कोई तुष्टीकरण की राजनीति के बारे में बता रहा है तो कोई लोक लुभावन वादों और मुफ्त की सुविधाओं पर जोर दे रहा है। देखा जाए तो ऐसे बयानों में नेताओं का सत्ता पाने का स्वार्थ झलकता है, देश का विकास नहीं। अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन और मानव विकास संस्थान के मुताबिक भारत में तीन में से दो शिक्षित युवा बेरोजगार हैं। विश्व के 30 में से 21 सबसे प्रदूषित शहर भारत में हैं। ऐसे गंभीर मुद्दों पर कोई राजनीतिक दल बात क्यों नहीं करता? ऐसी ही जाने कितनी समस्याएं हैं जो सर उठाए बुनियादी विकास के रास्ते में खड़ी हैं, पर नेता इनकी बात नहीं कर रहे। यही कारण है कि मतदान को लेकर लोगों के बीच उदासीनता नजर आती है, क्योंकि उन्हें लगता है की उनके एक वोट से कुछ नहीं बदलने वाला। दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र में मतदाताओं की ऐसी उदासीनता चिंताजनक है।

सोनल वर्मा, प्रयागराज

तुष्टीकरण की राजनीति

'बेनकाब हुई तुष्टीकरण की राजनीति' शीर्षक से लिखे आलेख में संजय गुप्त ने उन तमाम दलों के नेताओं की करगुजारियों से पर्दा उठाने का प्रयास किया है जो वास्तव में संप्रदायिक राजनीति है, लेकिन ऐसी राजनीति करने वाले दल इसे पंथनिरपेक्ष राजनीति करार दे रहे हैं। आखिर जब किसी जाति को पिछड़ा घोषित करने के मानक बने हुए हैं तब ऐसी स्थिति में अधिक से अधिक मुस्लिम जातियों को पिछड़ा घोषित कर आरक्षण देना उन पिछड़ी हिंदू जातियों की हकमारी ही तो है। यह तो अच्छा हुआ कि 2024 के लोकसभा चुनाव के प्रचार अभियान के जरिये जनता के सम्मुख यह यथार्थ सामने आ गया। हद तो तब जब कर्नाटक जैसे राज्य ने समस्त मुसलमानों को पिछड़ा मान आरक्षण का लाभ दे दिया।

मुकेश कुमार मनन, पटना

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।

अपने पत्र इस पते पर भेजें :

दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,

डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा

ई-मेल : mailbox@jagran.com

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त, पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन,नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन-महेन्द्र मोहन गुप्त, प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग,रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*

दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 *इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई/रेल शुल्क ₹-2 अतिरिक्त।

****

हिन्दुस्तान
1936

गरमी और आगजनी

ताप का असर चहुंओर दिखने लगा है। नौतपा के दिन शुरू हो गए हैं। माना जाता है कि सूर्य इन नौ दिनों में पृथ्वी के सबसे करीब आ जाता है। यह क्रम आगामी 2 जून तक चलेगा, पर जून के महीने में उत्तर भारत में गरमी से राहत की उम्मीद नहीं है। आगजनी की घटनाएं अचानक से बढ़ गई हैं। देश के अनेक शहरों में आगजनी के मामले कई गुना बढ़ गए हैं। इसी कड़ी में गुजरात के राजकोट में शनिवार को बहुत दुखद हादसा हुआ है। एक गेमिंग जोन में भीषण आग लगने से कई बच्चों समेत 30 से ज्यादा लोगों की मौत हो गई है। आग लगने का कारण जांच में चाहे जो भी सामने आए, पर इसमें मौसमी तापमान की बड़ी भूमिका है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने भी इस घटना पर गहरा दुख जताया है। गुजरात सरकार की ओर से मृतकों के परिजन को चार लाख और घायलों को 50 हजार रुपये देने की घोषणा ही पर्याप्त नहीं है, जो लोग दोषी हैं या जिन लोगों ने आग से बचने के पूरे इंतजाम नहीं रखे थे, उनके प्रति कतई नरमी बरतने की जरूरत नहीं है।

इधर दिल्ली में भी मुंडका इलाके में शनिवार को एक कार एसेसरीज फैक्टरी में ऐसी भीषण आग लगी कि बचाव कार्य के लिए रोबोट का इस्तेमाल करना पड़ा। फायर ब्रिगेड की 26 गाड़ियां भी मिलकर जल्दी आग नहीं बुझा पाईं। यहां भी आग का कारण तुरंत पता नहीं चला है, पर मौसम का असर साफ है। दरअसल, अनेक ऐसे कारखाने हैं, जहां गरमी के दिनों में भी काम को धीमा नहीं किया जाता है। चूंकि इन दिनों व्यावसायिक गतिविधियों में तेजी आई है, इसलिए तमाम कारखाने दिन-रात काम कर रहे हैं और आगजनी जैसी दुर्घटना की आशंका बढ़ जा रही है। क्या ऐसे कारखानों को कम से कम दिन के समय रोका जा सकता है, जहां आगजनी की आशंका ज्यादा है? जहां बचाव के इंतजाम पूरे नहीं हैं, वहां तो विशेष रूप से दिन के समय काम रोक देने में ही भलाई है। ध्यान देने की जरूरत है, आगजनी की घटनाएं नोएडा में भी सामने आई हैं, और बाजारों में भी लोगों को सावधानी से रहना सिखाया जा रहा है। उधर, गुरुवार को ही महाराष्ट्र के डोंबिवली के औद्योगिक क्षेत्र में आग लगने से कम से कम दस लोगों की मौत हो गई और 60 से अधिक घायल हो गए। क्या इस रासायनिक कारखाने को भीषण गरमी के समय बिना सुरक्षा इंतजाम के चलाना जरूरी था? दरअसल, ऐसे मामलों में दोषियों को पर्याप्त सजा नहीं मिलती है, इसलिए औद्योगिक क्षेत्रों में आगजनी का सिलसिला थमने का नाम नहीं ले रहा है।

अकेले दिल्ली की शिकायतों पर गौर कीजिए, मई के पहले 20 दिन में ही आग लगने संबंधी कॉल की संख्या पिछले साल की तुलना में दोगुनी से अधिक हो गई है।

वास्तव में, भीषण गरमी में आगजनी के इतने ज्यादा मामले हैं कि आप गिनते चले जाएंगे। इसके साथ ही चिंता की बात यह भी है कि बिजली की मांग बहुत बढ़ गई है। बड़े पैमाने पर वातानुकूलित यंत्रों का इस्तेमाल हो रहा है। मिसाल के लिए, दिल्ली में अब बिजली की मांग रिकॉर्ड 8,000 मेगावाट के पार चली जा रही है। नतीजा साफ है, जिस दिन मांग ने रिकॉर्ड तोड़ा, उस दिन राष्ट्रीय राजधानी में आगजनी के अनेक मामले सामने आए। अकेले एक शहर दिल्ली की शिकायतों पर गौर कीजिए, तो मई के पहले 20 दिनों में ही आग लगने की कॉल की संख्या पिछले साल की तुलना में दोगुनी से अधिक, 2,280 तक पहुंच गई। दिल्ली का अनुभव यह बताता है कि आग लगने के पचास प्रतिशत से ज्यादा मामलों में विद्युत संबंधी गड़बड़ी या कोताही ही जिम्मेदार होती है। अतः यह समय घर-घर सावधानी बरतने का है और प्रशासन को भी चौबीस घंटे सचेत रहना चाहिए।

हिन्दुस्तान Hindustan | 75 साल पहले 27 मई, 1949

उलझाने की चेष्टा

भारत के करोड़ों प्रजाजन, जिनमें हिन्दू, सिख, मुसलमान आदि सभी शामिल हैं, भली-भांति जानते हैं कि हैदराबाद के लायक अली मंत्रिमंडल ने अपनी कार्रवाइयों से रियासत को एक विषैले व्रण का रूप दे दिया था और यदि उसका उपचार उपयुक्त समय पर न होता तो भारत के अन्य अंगों में भी वह जहर फैल जाता। साधारण दवा-दारू से जब कुछ न हुआ तो चीरा लगाना आवश्यक हो गया। लेकिन इस शल्यक्रिया की यह विशेषता रही कि रक्तपात प्रायः हुआ ही नहीं किन्तु सारा मवाद फूटकर व्रण बिलकुल साफ हो गया। पाकिस्तान ने तथा हैदराबाद स्थित पाकिस्तानी एजेन्टों ने धमकी दी थी कि हैदराबाद के विरुद्ध पुलिस कार्रवाई करते ही सारे भारत में सांप्रदायिक उपद्रव भड़क उठेंगे। रजाकारों को गुमराह करने वाले तथा उन्हें विनाश के पथ पर ले जाने वाले उनके नेता कासिम रिजवी ने भारत के तीन करोड़ मुसलमानों का विद्रोह के लिए खुले तौर पर आह्वान किया, किन्तु सभी जानते हैं कि भारत में किसी ने तर्जनी भी नहीं उठाई और भारतीय सेना ने अपनी कार्रवाई में जिस असांप्रदायिक तथा निष्पक्ष भावना और अनुशासन का परिचय दिया, उसके लिए भारत के हिंदू तथा मुसलमान दोनों ने भारतीय सेना की भूरि-भूरि प्रशंसा की और हैदराबाद की समस्त जनता ने इस सेना का त्राणकारी सेना के रूप में स्वागत कर उसको अपनी हार्दिक कृतज्ञता अर्पित की। ऐसी स्थिति को देखकर पाकिस्तान की छाती पर सांप का लोटना आश्चर्य की बात नहीं। भारत के मध्य में एक और 'पाकिस्तान' के निर्माण का स्वप्न हवाई महल की भांति विलीन हो गया और साथ ही निजाम की उस दौलत का आसरा भी जाता रहा, जिसके बल पर पाकिस्तान अपनी आर्थिक कठिनाइयों को हल करना चाहता था। बस, इसीलिए पाकिस्तान ने हैदराबाद का मामला सुरक्षा परिषद में पेश कर दिया। इसमें उसकी हल्दी तथा फिटकरी तो कुछ लगती नहीं थी। हां, रंग चोखा निकले या न निकले इसकी पाकिस्तान को चिन्ता नहीं थी, क्योंकि सुरक्षा परिषद में कोई परिणाम निकले या न निकले, कम से कम भारत के विरुद्ध विषवमन का तो मौका मिल जाता है। इसके अतिरिक्त एक और कारण भी पाकिस्तान की इस कार्रवाई का प्रेरक हो सकता है और वह है काश्मीर का प्रश्न। जो लोग पाकिस्तानी नेताओं की मनोवृत्ति से परिचित हैं, उन्हें इस सम्बन्ध में आश्चर्य नहीं होना चाहिए।

बाजार में रह-रहकर तेजी के झोंके

यहां स्कैन करें

आलोक जोशी | वरिष्ठ पत्रकार

भारतीय रिजर्व बैंक ने पर्याप्त पैसे अपने पास रखने के बाद केंद्र सरकार को उम्मीद से दोगुना लाभांश दिया है, इससे शेयर बाजार में तगड़ी उछाल के साथ बड़ी रौनक बन गई है।

खूब परदा है कि चिलमन से लगे बैठे हैं। साफ छुपते भी नहीं, सामने आते भी नहीं। शेर तो मोहब्बत के मामले में लिखा गया है, मगर एकदम सटीक बैठता है शेयर बाजार पर। और उसमें भी उन लोगों पर, जो इस बाजार में कमाई के इरादे से पहुंचते हैं। नए छोटे निवेशक हों या दसियों साल से घाट-घाट का पानी पी रहे दिग्गज विदेशी संस्थान। हाल सबका एक-सा ही होता है। यही वजह है कि बाजार एक खबर सुनकर आसमान की तरफ भागने लगता है, तो दूसरी खबर या अफवाह भी उसे अचानक धड़ाम से गिरने पर मजबूर कर देती है।

चुनाव अंतिम चरण में है और इसी महीने का हाल देख लें, बल्कि पिछले महीने जिस दिन से लोकसभा चुनाव के वोट पड़ने शुरू हुए, उसी दिन से बाजार में सांप-सीढ़ी का खेल तेज हो गया है। बाजार में उतार-चढ़ाव, अनिश्चितता नापने वाला इंडेक्स इंडिया विक्स 19 अप्रैल को ही अचानक तेजी से ऊपर गया था। हालांकि, उसके दो दिन बाद ही इसमें करीब 15 प्रतिशत की नरमी आ चुकी थी, मगर फिर उसने ऊपर का रुख किया, तो पिछले बुधवार तक यह दोगुने से ऊपर पहुंच चुका था।

तरह-तरह की बातें हो रही थीं। विदेशी पोर्टफोलियो निवेशक या एफपीआई लगातार बिकवाली में जुटे थे। औसतन हर रोज 1,800 करोड़ रुपये की बिकवाली। खबरें यूं चल रही थीं कि चुनाव में कम मतदान देखकर बाजार घबरा गया है। यह भी कि विदेशी निवेशक सरकार के भविष्य को लेकर घबरा गए हैं और जोखिम नहीं लेना चाहते। हालांकि, साथ ही यह बात भी थी कि चीन की अर्थव्यवस्था में सुधार के कारण बहुत से विदेशी निवेशक भारत से शेयर बेचकर अब चीन पर दांव लगाने निकल पड़े हैं। फिर भी चुनाव के साथ बाजार का रिश्ता जोड़ा जा रहा था।

ऐसे विश्लेषण के साथ-साथ फलौदी का मशहूर सट्टा बाजार भी काम आ रहा था। सट्टे का कारोबार असल में कितना होता है, कोई नहीं जानता, पर सट्टे के नाम पर देश भर में चर्चा खूब होती है। तो यहां बात यह चली कि चुनाव शुरू होने से पहले फलौदी बाजार में भाजपा को जितनी सीटें दी जा रही थीं, वे जबर्दस्त जीत का संकेत देती थीं, मगर तीसरे चरण में आते-आते यह आंकड़ा कम हो गया है और अब बस बहुमत के आसपास का ही भाव लग रहा है।

जाहिर है, सट्टा बाजार का इस्तेमाल दांव लगाने से ज्यादा माहौल बनाने के लिए होता है और शेयर बाजार के बारे में तो कहा जाता है कि वहां सब कुछ माहौल या भावनाओं के भरोसे ही चलता है। खासकर रोज का उतार-चढ़ाव। ऐसे में, चुनावी अटकलों का बाजार पर असर पड़ना स्वाभाविक है और वह असर दिख भी रहा था। सबसे ज्यादा अटकलबाजी इसी बात पर हो रही थी कि वोटिंग कम हो रही है और बाजार इसे भाजपा के लिए परेशानी के तौर पर देख रहा है, पर चौथे चरण के बाद चुनाव आयोग ने साफ-साफ कह दिया कि मतदान कम नहीं, ज्यादा है। शेयर बाजार ने यह संकेत पढ़ लिया। उसी दिन बाजार में फिर तेजी का झोंका आया।

हालांकि, इसके बाद फिर थोड़ा उतार-चढ़ाव चलता रहा। यहां तक कि अब राजनेताओं के बीच भी बाजार का जिक्र बढ़ गया। पहले गृह मंत्री अमित शाह और फिर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी से ही सीधे सवाल पूछ लिए गए कि बाजार क्यों नर्वस दिख रहा है? अब जो जवाब आए, उनकी शायद किसी ने कल्पना भी नहीं की होगी। गृह मंत्री ने तो एकदम ताल ठोकने वाले अंदाज में कह दिया कि 4 जून से पहले शेयर खरीद लें, क्योंकि उसके बाद बाजार नया रिकॉर्ड बनाएगा। प्रधानमंत्री ने भी कह दिया कि जिस दिन चुनाव नतीजे आएंगे, उसके बाद वाले हफ्ते में शेयर बाजार रिकॉर्ड तोड़ भागेगा। उन्होंने यह भी याद दिला दिया कि जब उनकी सरकार बनी, तब सेंसेक्स 25,000 पर था, जो अब 75,000 को छू रहा है। सरकारी कंपनियों के शेयर जिन्हें लोग हाथ लगाने से डरते थे, वे कैसे आसमान छू रहे हैं? मगर इतनी बड़ी बात सुनकर भी लग रहा था कि शायद बाजार को अभी कुछ और चाहिए। यह भी सवाल था कि आखिर विदेशी निवेशक किस चीज का इंतजार कर रहे हैं। बुधवार को बाजार के बंद होने तक यह सवाल बना हुआ था।

और बुधवार की शाम ही भारतीय रिजर्व बैंक ने फैसला किया कि इस साल वह अपने खजाने से सरकार को दो लाख दस हजार करोड़ रुपये की रकम देने जा रहा है। मतलब यह नहीं है कि वह खजाना खाली कर रहा है, बल्कि वह अपनी कमाई में से सरकार को हिस्सा दे रहा है, जैसे कंपनियां अपने मुनाफे से अपने शेयरधारकों को हिस्सा देती हैं। भारत सरकार रिजर्व बैंक की इकलौती मालिक या शेयर होल्डर है। इसलिए रिजर्व बैंक अपना जमा खर्च जोड़ने के बाद जो रकम बचती है, वह सरकार को दे देता है। हालांकि, किसी अनहोनी से निपटने के लिए वह साढ़े पांच से साढ़े छह प्रतिशत रकम अपने पास रखता है। इस बार खासियत यह रही कि पूरे साढ़े छह प्रतिशत बचाने के बाद भी उसने सरकार को उम्मीद से दोगुना लाभांश दे दिया। अर्थशास्त्री अनुमान लगा रहे थे कि सरकार को एक लाख करोड़ रुपये तक मिल सकते हैं। यहां तक कि पिछले बजट में भी इस रास्ते जीडीपी का 0.3 प्रतिशत आने की उम्मीद जताई गई थी, जो एक लाख करोड़ रुपये से कुछ ही ज्यादा होता।

बस रिजर्व बैंक ने जो उम्मीद से ज्यादा दिया, मानो बाजार को मुंहमांगी मुराद मिल गई। सेंसेक्स ने बारह सौ प्वॉइंट की छलांग लगाई और निफ्टी के साथ नई ऊंचाई पर पहुंच गई। यही नहीं, भारत के शेयर बाजार का मार्केट कैप भी उछलकर पांच लाख करोड़ डॉलर के ऊपर पहुंच गया, यानी फाइव ट्रिलियन। यह वही आंकड़ा है, जहां भारत की अर्थव्यवस्था को पहुंचाने का लक्ष्य रखा गया है। शेयर बाजार ने तो यह शिखर हासिल करके दिखा दिया है।

बाजार की नजर से देखें, तो अभी बहुत से लोग चिलमन से लगे बैठे हैं। उतार-चढ़ाव भी बने रहने की गुंजाइश है, पर अंत में हरिवंश राय बच्चन को याद कर लेना फायदेमंद रहेगा, क्योंकि *मधुशाला* की यह एक पंक्ति न सिर्फ जीवन के लिए, बल्कि शेयर बाजार में पैसा लगाने वालों के लिए भी एकदम सटीक है- *राह पकड़ तू एक चला चल पा जाएगा मधुशाला।*

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

सबका कूड़ा बीनते हुए अपनी जिंदगी जीते लोगों की सुध

यहां स्कैन करें

अनुराग बेहर | सीईओ, अजीम प्रेमजी फाउंडेशन

यहां दो एकड़ जमीन पर कूड़े के ढेर पसरे हैं और हर ढेर में शहर से जमा किया गया कूड़ा ठूंस-ठूंसकर भरा है। श्रमिक, जिनको हम कूड़ा बीनने वाला कहते हैं, शहर भर से कचरा जमा करते हैं और यहां लेकर आते हैं। फिर, वे इनको छांटते हैं और हर वह छोटी-से-छोटी चीज अलग करते हैं, जिसका थोड़ा सा भी मोल होता है। इनको वह ठेकेदार ले लेता है, जिनके लिए वे काम करते हैं और वह जमा की गई प्लास्टिक की बोतलें, धातु और बाकी चीजें रीसाइक्लिंग, यानी फिर से इस्तेमाल के लायक बनाने के लिए बेच देता है। शेष कचरा यहां महीनों-वर्षों तक पड़ा रहता है और बढ़ता रहता है।

ये मजदूर यहीं कूड़े के बीच झोपड़ी बनाकर रहते हैं। इस 'डंपिंग साइट' पर 12 ठेकेदार हैं और सबके मजदूर अपने ठेकेदार के तय स्थान पर ही रहते हैं। ये अकेले नहीं, अपने पूरे परिवार के साथ यहां हैं। सुदूर इलाकों से या उन क्षेत्रों से इन्हें लाया गया है, जहां से ठेकेदार खुद आते हैं। यहां पर रहने वाले लोगों की संख्या करीब 500 है और वे कोई किराया नहीं देते, बल्कि इसके एवज में उन्हें अपने ठेकेदारों के लिए काम करना पड़ता है। कई श्रमिकों का तो पूरा परिवार इसी काम में जुटा है, उनके बच्चे भी। स्थिति अच्छी रही, तो पांच लोगों का परिवार 10 हजार और बुरे हालात में चार हजार तक कमा सकता है, जो इस बात पर निर्भर करता है कि वे कितने इलाकों में कूड़ा बीन पाते हैं। ज्यादातर एक दिन में 30-40 किलोमीटर घूमते हैं। बीमार होने या किसी अन्य वजह से यदि वे ऐसा नहीं कर पाते, तो उस दिन की उनकी कमाई मारी जाती है। मौसम भी कभी-कभार रुकावट बन जाता है। हालांकि, हल्की-फुल्की बारिश, तेज धूप या ठंड उनको रोक नहीं पाती, हां, उनके कदम जरूर धीमे कर देती है। तेज बारिश नुकसानदेह होती है, क्योंकि पानी में कचरा छांटना काफी कठिन होता है।

यह आशा से परे है कि ये फिलहाल इन ढेरों से बाहर निकल सकेंगे, पर हम चाहें, तो कुछ छोटे बदलाव करके इनको राहत दे सकते हैं।

दिन-ब-दिन और साल-दर-साल शहर की खाक छानने की इस यात्रा में जो लोग कचरा जुटाने के लिए रिक्शा आदि जुगाड़ करने में सक्षम रहे हैं, उनकी स्थिति अलग है। वे ज्यादा इलाकों से कचरा इकट्ठा कर पाते हैं और कूड़े की उनकी मात्रा भी अधिक होती है। मगर वे भी इस काम के आसन्न खतरे से बच नहीं पाते। चूंकि इन लोगों को अपने हाथ कूड़ेदानों में डालने पड़ते हैं, जिनमें कांच के टुकड़े, केमिकल, सड़ने वाले कार्बनिक पदार्थ और इससे भी बदतर चीजें हो सकती हैं, इसलिए हाथों में गहरे घाव, संक्रमण और चर्मरोग इनके लिए पुरस्कार सरीखे बन जाते हैं। जिस डंपिंग साइट की मैंने यहां चर्चा की है, वहां पानी की व्यवस्था भी नहीं है। पीने और साफ-सफाई के लिए टैंक से पानी मंगवाना होता है, जिस पर इनको अपनी आमदनी का तकरीबन 10-20 फीसदी हिस्सा खर्च करना पड़ता है। बड़ी मशक्कत के बाद यहां कोई एनजीओ सुलभ शौचालय बनाने में सफल हो सका है। सुदूर इलाकों से आने के कारण इन लोगों के पास राशन कार्ड नहीं है। एकाध के पास ही सरकारी योजनाएं पहुंच रही हैं। यहां के बच्चों को स्कूलों में दाखिला मिलना मुश्किल है, क्योंकि वे स्कूलों के लिए शायद 'गंदे छात्र' होते हैं। इस दो एकड़ जमीन पर छाया के नाम पर सिर्फ एक पेड़ है।

यह आशा से परे है कि ये फिलहाल इन ढेरों से बाहर निकल सकेंगे। हमारी सामाजिक संरचना शायद ही बदल सकती है। हां, हम यदि नैतिक साहस दिखाएं और निरंतर सामूहिक व राजनीतिक प्रयास करें, तो बात बन सकती है, लेकिन फिलहाल ऐसा करने में हम असमर्थ हैं। लिहाजा, हम अभी वैसे ही रहेंगे, जैसे हम जी रहे हैं और वे भी वैसे ही जीएंगे, जैसे हम उनको जीने देंगे। वैसे, हम चाहें, तो कुछ छोटे बदलाव कर सकते हैं। मसलन, उनको 'कचरा बीनने वाला' कहना बंद कीजिए, क्योंकि वे हमें स्वच्छ रखते हैं। राज्य और स्थानीय प्रशासन के अधिकारियों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि उन्हें सभी सरकारी योजनाओं का लाभ मिले। हमें अपने स्कूलों में उनके बच्चों को बर्दाश्त करना भी सीखना होगा या उनकी साफ-सफाई की मुकम्मल व्यवस्था करनी होगी। और अंत में, हमें घर का कचरा फेंकते वक्त शीशा, कांच या नुकीली चीजों को लेकर सावधान रहना चाहिए, ताकि इनके बच्चों को नुकसान न पहुंचे। इनके लिए हम कम से कम इतना तो कर ही सकते हैं।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

मनसा वाचा कर्मणा

डीप फेक और रामायण

आजकल डीप फेक के बड़े चर्चे हैं। कंप्यूटर के सहारे यह तकनीक लोगों के चेहरों, वीडियो या ऑडियो की नकल बना सकती है। यकीनन दुश्मनों या धोखेबाजों के हाथ में यह एक शक्तिशाली हथियार बन सकता है। डीप फेक की जो संभावनाएं हैं, वे कुछ ऐसी ही हैं, जिस तरह पुराण काल में राक्षसों की मायावी शक्ति होती थी। सबसे बड़ा उदाहरण है मारीच राक्षस का, जिसने सुनहरे हिरण का रूप लेकर राम जी को धोखा दिया था। उसने न केवल रूप धरा, मरते समय उसने राम जी की डीप फेक आवाज में पुकार भी दी, 'हा, लक्ष्मण!' ताकि कुटी में बैठी देवी सीता को लगे कि राम का जीवन संकट में है।

यह जो डीप फेक जैसी मायावी शक्ति थी, यह मनुष्य के हाथों में थी, इसलिए इसका उपयोग करना है या न करना, इसे वही तय कर सकता था। मारीच की कथा का एक छिपा हुआ पहलू है। वह राक्षस जाति का था, लेकिन उस समय इस शब्द का अर्थ इतना बुरा नहीं था। राक्षस का मूल धातु है रक्षा करना। तो जो रक्षा करते थे, वे राक्षस। रावण का पूरा खानदान इसी जाति का था। ऋग्वेद में राक्षस शब्द का उपयोग सकारात्मक अर्थों में किया गया है। बताया जाता है कि पहले राक्षस धरती और आकाश में रहने वाले प्राणियों की रक्षा करते थे, लेकिन धीरे-धीरे इन राक्षसों में अपनी शक्ति और बल का अहंकार आने लगा। इसके कारण इन्होंने शुभ कर्म करने वालों को परेशान करना शुरू कर दिया। वे विघ्नकर्ता बन गए। जाहिर है कि शक्ति एक दोधारी तलवार है, जो काट सकती है और बचा भी सकती है।

मारीच की एक कहानी यह भी है कि रावण अपने मामा मारीच को मनाने गया कि वह हिरण का रूप धरकर श्रीराम को भटकाए, ताकि अकेली सीता का अपहरण किया जा सके। मगर मारीच ने मना करते हुए कहा, 'अपनी समस्त मायावी शक्तियों का त्याग करके मैंने संन्यास ले लिया है और श्रीराम दिव्य पुरुष हैं। अतः यह काम मैं नहीं कर सकूंगा।' तब रावण ने क्रोध से भरकर कहा, 'मेरी आज्ञा नहीं माननी है, तो आप मृत्यु के लिए तैयार हो जाएं।'

यह जो डीप फेक जैसी मायावी शक्ति थी, यह मनुष्य के हाथों में तब भी थी, इसलिए इसका उपयोग करना है या नहीं करना है, इसे वही तय कर सकता है।

मारीच ने सोचा, मेरी मौत तो सुनिश्चित है ही, फिर क्यों न श्रीराम के बाण से मरूं? यह दर्शाता है कि मारीच के अंदर उसका सात्विक भाव जिंदा था। वह श्रीराम की दिव्यता से परिचित था। इसकी पुष्टि श्रीराम की ओर से भी मिलती है। जब श्रीराम ने हिरण को बाण मारा, तो मारीच ने अपना असली रूप प्रकट किया और दोनों हाथ जोड़ दिए। रामजी ने भी उसके भक्त-हृदय को पहचान लिया और उसे मुक्ति दे दी। डीप फेक जैसी शक्तियां अगर सद्भाव से भरे लोगों के हाथों में हों, तो उनसे नुकसान नहीं होगा।

अमृत साधना

कैलाश सत्यार्थी | नोबेल विजेता

56 राष्ट्रमंडल देशों में करीब 12 करोड़, 30 लाख बच्चे स्कूल से बाहर हैं। किसके हैं ये बच्चे? ये किसकी संतानें गुलामी में फंसी हुई हैं? युद्धों और हिंसक संघर्षों में किसके बच्चे मारे जाते हैं या अपंग हो जाते हैं? ये सभी हमारे बच्चे हैं!

अनुलोम-विलोम
अग्निपथ योजना

अग्निवीरों पर होती राजनीति गलत

आए दिन विपक्षी दलों द्वारा अग्निपथ योजना को खत्म करने की बात कही जा रही है। उनको इस योजना की तह में नहीं जाना, बस इसकी आलोचना करनी है, क्योंकि एनडीए सरकार द्वारा शुरू की गई यह योजना है और राजनीतिक पैंतरेबाजी के तहत उनके लिए इसका विरोध अनिवार्य है। यही कारण है कि सत्ता में आते ही विपक्ष द्वारा इसे कूड़े के ढेर में फेंक देने की बात कही जा रही है। बार-बार यही कहा जा रहा है कि अग्निपथ योजना बीते दिनों की बात हो जाएगी, जबकि चुनाव आयोग ने भी ऐसे विषयों को संज्ञान में लिया है। इन सबसे जनता की नजर में विपक्ष की छवि खराब हो रही है। ऐसा लगता है कि सिर्फ कुरसी पाना ही विपक्षी दलों का एकमात्र मकसद है, जनता का कल्याण अथवा देशहित की बात वे नहीं कर रहे। अग्निपथ योजना की खासियत अगर उनको समझ नहीं आ रही, तो पहले वे इसे समझें, फिर इसके खात्मे की बात करें। आखिर कोई नेता आम नागरिकों के हित की या देश को तरक्की के पथ पर कैसे आगे बढ़ाना है, इस पर बात क्यों नहीं करता? क्या कुछ नेताओं का एकमात्र मकसद चुनाव को किसी भी हाल में जीतना ही है।

शैलबाला कुमारी, गृहिणी

एक विचार है यह

अग्निपथ योजना आखिर है क्या? क्यों विपक्ष के लोग इसका विरोध करते रहते हैं? कांग्रेस ने तो अपने घोषणापत्र में इसे खत्म करने का भी एलान कर दिया है। यदि हमें इस योजना को समझना है, तो इसकी गहराई में जाना पड़ेगा। फौज में आमतौर पर पढ़े-लिखे गरीब नौजवान भर्ती होना चाहते हैं। सेना को अगर 5,000 जवानों की भर्ती करनी है, तो वह करीब 20,000 नौजवानों को बतौर अग्निवीर चयनित करती है, जिनके चार साल के कार्यकाल को प्रशिक्षण ही मानिए और उसके बाद सबसे सफल 5,000 जवानों को फौज अपने में समाहित कर लेती है। इससे निश्चित तौर पर सेना को सबसे अच्छे जवान मिलते हैं। हालांकि, ऐसा नहीं है कि जो 15,000 अग्निवीर पीछे रह जाते हैं, वे खाली हाथ रह जाते हैं। उनको भी बहुत फायदा होता है। एक तो उन्हें एकमुश्त एक रकम मिल जाती है, जिससे भविष्य में वह कोई भी अपना काम कर सकते हैं। फिर, चार साल का फौजी जीवन उन्हें एक काबिल इंसान बनाने में मददगार साबित होता है। ऐसे में, भला कोई कैसे इस योजना की अलोचना कर सकता है? जाहिर है, जो अभी विरोध कर रहे हैं, वे इस योजना के मूल मकसद से अनजान हैं। उनको बुनियादी जानकारी हासिल करनी चाहिए, फिर इसके पक्ष या विपक्ष में अपनी राय बनानी चाहिए।

बजरंग, टिप्पणीकार

नौजवानों के साथ एक भद्दा मजाक

किसी भी सरकार की यह पहली जिम्मेदारी होती है कि वह अपने नागरिकों को सुरक्षा व सम्मानजनक नौकरी दे। बेशक, सरकार सभी जरूरतमंदों को सरकारी पद नहीं दे सकती, लेकिन कम से कम ऐसी व्यवस्था तो कर ही सकती है कि हर योग्य हाथ को वाजिब काम मिले। अग्निपथ योजना ऐसे हाथों को बेकाम बनाती है। इसमें चार साल तक सरकार नौजवानों की प्रतिभा का इस्तेमाल करती है और फिर उनमें से चंद जवानों को फौज में शामिल करके शेष को वापस घर भेज देती है। इस तरह, जवानी के बहुमूल्य चार साल देश को देने के बाद अग्निवीरों को कुछ हासिल नहीं होता और वे खाली हाथ रह जाते हैं। हां, अगर चार साल के बाद उनको किसी अन्य सेवा में रोजगार की गारंटी मिले, तो इस योजना को सराहा जा सकता है, लेकिन ऐसा करने की कोई नीयत नहीं दिखाई गई, इसलिए इस योजना का विरोध वाजिब जान पड़ रहा है। इसलिए इसकी आलोचना होनी चाहिए, क्योंकि फौज की जरूरतें चार साल की इस कॉन्ट्रैक्ट वाली नौकरी से शायद ही पूरी होती हैं। वह तो नौकरी की शुरुआत में नौजवानों पर इसलिए निवेश करती है, क्योंकि वह उनकी संभावनाओं का अपने हित में इस्तेमाल करना चाहती है। अग्निवीरों के साथ ऐसा नहीं होता। इसीलिए, यदि इस बार आम चुनाव में अग्निपथ योजना सुर्खियों में है और यह गलत नहीं है। इस योजना को कूड़ेदान में ही फेंकना चाहिए। देश के नौजवानों को स्थायी और सुरक्षित रोजगार मिलना चाहिए। उनको अग्निवीर बनाना उनके हितों के साथ समझौता करना है।

चंदन कुमार, टिप्पणीकार

नुकसान है इसका

अभी ज्यादा दिन नहीं हुए, जब यह खबर आई थी कि अग्निपथ योजना की वजह से नेपाल अपने गोरखा जवानों को भारतीय सेना में भेजने में हीला-हवाली कर रहा है। दूसरी ओर, भारत को सबसे बड़ा खतरा चीन से है, जो सीमावर्ती इलाकों पर नजर गड़ाए बैठा है। बीजिंग अब इन गोरखा लोगों को अपनी फौज में लेने के लिए उतावला हो रहा है। जाहिर है, अग्निपथ योजना के रूप में एक बचकानी नीति ने हमारे सामने गोरखा योद्धाओं के नुकसान का संकट खड़ा कर दिया है, जबकि उनकी बहादुरी की चर्चा पूरी दुनिया में रही है और दुर्गम पहाड़ी इलाकों के लिए वे काफी दक्ष माने जाते रहे हैं। इन सब मुश्किलों को देखते हुए हमें अग्निपथ योजना की फिर से समीक्षा करनी चाहिए। अगर हम आने वाले दिनों में अपनी फौज को अधिक ताकतवर बनाना चाहते हैं, तो हमें सही विकल्प ढूंढ़ना होगा। अग्निपथ योजना फायदा कम और नुकसान ज्यादा करती दिख रही है।

दीपक, टिप्पणीकार